एकादशी की रात्रि में श्रीहरि के समीप जागरण का माहात्मय

सब धर्मों के ज्ञाता, वेद और शास्त्रों के अर्थज्ञान में पारंगत, सबके हृदय में रमण करनेवाले श्रीविष्णु के तत्त्व को जाननेवाले तथा भगवत्परायण प्रह्लादजी जब सुखपूर्वक बैठे हुए थे, उस समय उनके समीप स्वधर्म का पालन करनेवाले महर्षि कुछ पूछने के लिए आये ।

महर्षियों ने कहा : प्रह्लादजी ! आप कोई ऐसा साधन बताइये, जिससे ज्ञान, ध्यान और इन्द्रियनिग्रह के बिना ही अनायास भगवान विष्णु का परम पद प्राप्त हो जाता है ।

उनके ऐसा कहने पर संपूर्ण लोकों के हित के लिए उद्यत रहनेवाले विष्णुभक्त महाभाग प्रह्लादजी ने संक्षेप में इस प्रकार कहा : महर्षियों ! जो अठारह पुराणों का सार से भी सारतर तत्त्व है, जिसे कार्तिकेयजी के पूछने पर भगवान शंकर ने उन्हें बताया था, उसका वर्णन करता हूँ, सुनिये ।

महादेवजी कार्तिकेय से बोले : जो कलि में एकादशी की रात में जागरण करते समय वैष्णव शास्त्र का पाठ करता है, उसके कोटि जन्मों के किये हुए चार प्रकार के पाप नष्ट हो जाते हैं । जो एकादशी के दिन वैष्णव शास्त्र का उपदेश करता है, उसे मेरा भक्त जानना चाहिए ।

जिसे एकादशी के जागरण में निद्रा नहीं आती तथा जो उत्साहपूर्वक नाचता और गाता है, वह मेरा विशेष भक्त है । मैं उसे उत्तम ज्ञान देता हूँ और भगवान विष्णु मोक्ष प्रदान करते हैं । अत: मेरे भक्त को विशेष रुप से जागरण करना चाहिए । जो भगवान विष्णु से वैर करते हैं, उन्हें पाखण्डी जानना चाहिए । जो एकादशी को जागरण करते और गाते हैं, उन्हें आधे निमेष में अग्निष्टोम तथा अतिरात्र यज्ञ के समान फल प्राप्त होता है । जो रात्रि जागरण में बारंबार भगवान विष्णु के मुखारविंद का दर्शन करते हैं, उनको भी वही फल प्राप्त होता है । जो मानव द्वादशी तिथि को भगवान विष्णु के आगे जागरण करते हैं, वे यमराज के पाश से मुक्त हो जाते हैं ।

जो द्वादशी को जागरण करते समय गीता शास्त्र से मनोविनोद करते हैं, वे भी यमराज के बन्धन से मुक्त हो जाते हैं । जो प्राणत्याग हो जाने पर भी द्वादशी का जागरण नहीं छोड़ते, वे धन्य और पुण्यात्मा हैं । जिनके वंश के लोग एकादशी की रात में जागरण करते हैं, वे ही धन्य हैं । जिन्होंने एकादशी को जागरण किया हैं, उन्होंने यज्ञ, दान , गयाश्राद्ध और नित्य प्रयागस्नान कर लिया । उन्हें संन्यासियों का पुण्य भी मिल गया और उनके द्वारा इष्टापूर्त कर्मों का भी भलीभाँति पालन हो गया । षडानन ! भगवान विष्णु के भक्त जागरणसहित एकादशी व्रत करते हैं, इसलिए वे मुझे सदा ही विशेष प्रिय हैं । जिसने वर्द्धिनी एकादशी की रात में जागरण किया है, उसने पुन: प्राप्त होनेवाले शरीर को स्वयं ही भस्म कर दिया । जिसने त्रिस्पृशा एकादशी को रात में जागरण

किया है, वह भगवान विष्णु के स्वरुप में लीन हो जाता है । जिसने हरिबोधिनी एकादशी की रात में जागरण किया है, उसके स्थूल सूक्ष्म सभी पाप नष्ट हो जाते हैं । जो द्वादशी की रात में जागरण तथा ताल स्वर के साथ संगीत का आयोजन करता है, उसे महान पुण्य की प्राप्ति होती है । जो एकादशी के दिन ऋषियों द्वारा बनाये हुए दिव्य स्तोत्रों से, ऋग्वेद , यजुर्वेद तथा सामवेद के वैष्णव मन्त्रों से, संस्कृत और प्राकृत के अन्य स्तोत्रों से व गीत वाद्य आदि के द्वारा भगवान विष्णु को सन्तुष्ट करता है उसे भगवान विष्णु भी परमानन्द प्रदान करते हैं ।

यः पुनः पठते रात्रौ गातां नामसहस्रकम् ।
द्वादश्यां पुरतो विष्णोर्वैष्णवानां समापतः ।
स गच्छेत्परम स्थान यत्र नारायणः त्वयम् ।

जो एकादशी की रात में भगवान विष्णु के आगे वैष्णव भक्तों के समीप गीता और विष्णुसहस्रनाम का पाठ करता है, वह उस परम धाम में जाता है, जहाँ साक्षात् भगवान नारायण विराजमान हैं ।

पुण्यमय भागवत तथा स्कन्दपुराण भगवान विष्णु को प्रिय हैं । मथुरा और व्रज में भगवान विष्णु के बालचरित्र का जो वर्णन किया गया है, उसे जो एकादशी की रात में भगवान केशव का पूजन करके पढ़ता है, उसका पुण्य कितना है, यह मैं भी नहीं जानता । कदाचित् भगवान विष्णु जानते हों । बेटा ! भगवान के समीप गीत, नृत्य तथा स्तोत्रपाठ आदि से जो फल होता है, वही कलि में श्रीहरि के समीप जागरण करते समय 'विष्णुसहस्रनाम, गीता तथा श्रीमद्भागवत' का पाठ करने से सहस्र गुना होकर मिलता है ।

जो श्रीहरि के समीप जागरण करते समय रात में दीपक जलाता है, उसका पुण्य सौ कल्पों में भी नष्ट नहीं होता । जो जागरणकाल में मंजरीसहित तुलसीदल से भक्तिपूर्वक श्रीहरि का पूजन करता है, उसका पुनः इस संसार में जन्म नहीं होता । स्नान, चन्दन , लेप, धूप, दीप, नैवेघ और ताम्बूल यह सब जागरणकाल में भगवान को समर्पित किया जाय तो उससे अक्षय पुण्य होता है । कार्तिकेय ! जो भक्त मेरा ध्यान करना चाहता है, वह एकादशी की रात्रि में श्रीहरि के समीप भक्तिपूर्वक जागरण करे । एकादशी के दिन जो लोग जागरण करते हैं उनके शरीर में इन्द्र आदि देवता आकर स्थित होते हैं । जो जागरणकाल में महाभारत का पाठ करते हैं, वे उस परम धाम में जाते हैं जहाँ संन्यासी महात्मा जाया करते हैं । जो उस समय श्रीरामचन्द्रजी का चरित्र, दशकण्ठ वध पढ़ते हैं वे योगवेत्ताओं की गति को प्राप्त होते हैं ।

जिन्होंने श्रीहरि के समीप जागरण किया है, उन्होंने चारों वेदों का स्वाध्याय, देवताओं का पूजन, यज्ञों का अनुष्ठान तथा सब तीर्थों में स्नान कर लिया । श्रीकृष्ण से बढ़कर कोई देवता नहीं है और एकादशी व्रत के समान दूसरा कोई व्रत नहीं है । जहाँ भागवत शास्त्र है, भगवान विष्णु के लिए जहाँ जागरण किया जाता है और जहाँ शालग्राम शिला स्थित होती है, वहाँ साक्षात् भगवान

विष्णु उपस्थित होते हैं ।

एकादशी व्रत विधि

दशमी की रात्रि को पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन करें तथा भोग विलास से भी दूर रहें । प्रात: एकादशी को लकड़ी का दातुन तथा पेस्ट का उपयोग न करें; नींबू, जामुन या आम के पत्ते लेकर चबा लें और उँगली से कंठ शुद्ध कर लें । वृक्ष से पत्ता तोड़ना भी वर्जित है, अत: स्वयं गिरे हुए पत्ते का सेवन करे । यदि यह सम्भव न हो तो पानी से बारह कुल्ले कर लें । फिर स्नानादि कर मंदिर में जाकर गीता पाठ करें या पुरोहितादि से श्रवण करें । प्रभु के सामने इस प्रकार प्रण करना चाहिए कि: 'आज मैं चोर, पाखण्डी और दुराचारी मनुष्य से बात नहीं करुँगा और न ही किसीका दिल दुखाऊँगा । गौ, ब्राह्मण आदि को फलाहार व अन्नादि देकर प्रसन्न करुँगा । रात्रि को जागरण कर कीर्तन करुँगा , **'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय'** इस द्वादश अक्षर मंत्र अथवा गुरुमंत्र का जाप करुँगा, राम, कृष्ण , नारायण इत्यादि विष्णुसहस्रनाम को कण्ठ का भूषण बनाऊँगा ।' - ऐसी प्रतिज्ञा करके श्रीविष्णु भगवान का स्मरण कर प्रार्थना करें कि : 'हे त्रिलोकपति ! मेरी लाज आपके हाथ है, अत: मुझे इस प्रण को पूरा करने की शक्ति प्रदान करें ।' मौन, जप, शास्त्र पठन , कीर्तन, रात्रि जागरण एकादशी व्रत में विशेष लाभ पँहुचाते हैं।

एकादशी के दिन अशुद्ध द्रव्य से बने पेय न पीयें । कोल्ड ड्रिंक्स, एसिड आदि डाले हुए फलों के डिब्बाबंद रस को न पीयें । दो बार भोजन न करें । आइसक्रीम व तली हुई चीजें न खायें । फल अथवा घर में निकाला हुआ फल का रस अथवा थोड़े दूध या जल पर रहना विशेष लाभदायक है । व्रत के (दशमी, एकादशी और द्वादशी) -इन तीन दिनों में काँसे के बर्तन, मांस, प्याज, लहसुन, मसूर, उड़द, चने, कोदो (एक प्रकार का धान), शाक, शहद, तेल और अत्यम्बुपान (अधिक जल का सेवन) - इनका सेवन न करें । व्रत के पहले दिन (दशमी को) और दूसरे दिन (द्वादशी को) हविष्यान्न (जौ, गेहूँ, मूँग, सेंधा नमक, कालीमिर्च, शर्करा और गोघृत आदि) का एक बार भोजन करें।

फलाहारी को गोभी, गाजर, शलजम, पालक, कुलफा का साग इत्यादि सेवन नहीं करना चाहिए । आम, अंगूर, केला, बादाम, पिस्ता इत्यादि अमृत फलों का सेवन करना चाहिए ।

जुआ, निद्रा, पान, परायी निन्दा, चुगली, चोरी, हिंसा, मैथुन, क्रोध तथा झूठ, कपटादि अन्य कुकर्मों से नितान्त दूर रहना चाहिए । बैल की पीठ पर सवारी न करें ।

भूलवश किसी निन्दक से बात हो जाय तो इस दोष को दूर करने के लिए भगवान सूर्य के दर्शन तथा धूप दीप से श्रीहरि की पूजा कर क्षमा माँग लेनी चाहिए । एकादशी के दिन घर में झाड़ू

नहीं लगायें, इससे चींटी आदि सूक्ष्म जीवों की मृत्यु का भय रहता है । इस दिन बाल नहीं कटायें । मधुर बोलें, अधिक न बोलें, अधिक बोलने से न बोलने योग्य वचन भी निकल जाते हैं । सत्य भाषण करना चाहिए । इस दिन यथाशक्ति अन्नदान करें किन्तु स्वयं किसीका दिया हुआ अन्न कदापि ग्रहण न करें । प्रत्येक वस्तु प्रभु को भोग लगाकर तथा तुलसीदल छोड़कर ग्रहण करनी चाहिए ।

एकादशी के दिन किसी सम्बन्धी की मृत्यु हो जाय तो उस दिन व्रत रखकर उसका फल संकल्प करके मृतक को देना चाहिए और श्रीगंगाजी में पुष्प (अस्थि) प्रवाहित करने पर भी एकादशी व्रत रखकर व्रत फल प्राणी के निमित्त दे देना चाहिए । प्राणिमात्र को अन्तर्यामी का अवतार समझकर किसीसे छल कपट नहीं करना चाहिए । अपना अपमान करने या कटु वचन बोलनेवाले पर भूलकर भी क्रोध नहीं करें । सन्तोष का फल सर्वदा मधुर होता है । मन में दया रखनी चाहिए । इस विधि से व्रत करनेवाला उत्तम फल को प्राप्त करता है । द्वादशी के दिन ब्राह्मणों को मिष्टान्न, दक्षिणादि से प्रसन्न कर उनकी परिक्रमा कर लेनी चाहिए ।

व्रत खोलने की विधि :

द्वादशी को सेवापूजा की जगह पर बैठकर भुने हुए सात चनों के चौदह टुकड़े करके अपने सिर के पीछे फेंकना चाहिए । 'मेरे सात जन्मों के शारीरिक, वाचिक और मानसिक पाप नष्ट हुए' - यह भावना करके सात अंजलि जल पीना और चने के सात दाने खाकर व्रत खोलना चाहिए ।

उत्पत्ति एकादशी

उत्पत्ति एकादशी का व्रत हेमन्त ॠतु में मार्गशीर्ष मास के कृष्णपक्ष (गुजरात महाराष्ट्र के अनुसार कार्तिक) को करना चाहिए । इसकी कथा इस प्रकार है :

युधिष्ठिर ने भगवान श्रीकृष्ण से पूछा : भगवन् ! पुण्यमयी एकादशी तिथि कैसे उत्पन्न हुई? इस संसार में वह क्यों पवित्र मानी गयी तथा देवताओं को कैसे प्रिय हुई?

श्रीभगवान बोले : कुन्तीनन्दन ! प्राचीन समय की बात है । सत्ययुग में मुर नामक दानव रहता था । वह बड़ा ही अदभुत, अत्यन्त रौद्र तथा सम्पूर्ण देवताओं के लिए भयंकर था । उस कालरुपधारी दुरात्मा महासुर ने इन्द्र को भी जीत लिया था । सम्पूर्ण देवता उससे परास्त होकर स्वर्ग से निकाले जा चुके थे और शंकित तथा भयभीत होकर पृथ्वी पर विचरा करते थे । एक दिन सब देवता महादेवजी के पास गये । वहाँ इन्द्र ने भगवान शिव के आगे सारा हाल कह सुनाया ।

इन्द्र बोले : महेश्वर ! ये देवता स्वर्गलोक से निकाले जाने के बाद पृथ्वी पर विचर रहे हैं । मनुष्यों के बीच रहना इन्हें शोभा नहीं देता । देव ! कोई उपाय बतलाइये । देवता किसका सहारा लें ?

महादेवजी ने कहा : देवराज ! जहाँ सबको शरण देनेवाले, सबकी रक्षा में तत्पर रहने वाले जगत के स्वामी भगवान गरुड़ध्वज विराजमान हैं, वहाँ जाओ । वे तुम लोगों की रक्षा करेंगे ।

भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं : युधिष्ठिर ! महादेवजी की यह बात सुनकर परम बुद्धिमान देवराज इन्द्र सम्पूर्ण देवताओं के साथ क्षीरसागर में गये जहाँ भगवान गदाधर सो रहे थे । इन्द्र ने हाथ जोड़कर उनकी स्तुति की ।

इन्द्र बोले : देवदेवेश्वर ! आपको नमस्कार है ! देव ! आप ही पति, आप ही मति, आप ही कर्त्ता और आप ही कारण हैं । आप ही सब लोगों की माता और आप ही इस जगत के पिता हैं । देवता और दानव दोनों ही आपकी वन्दना करते हैं । पुण्डरीकाक्ष ! आप दैत्यों के शत्रु हैं । मधुसूदन ! हम लोगों की रक्षा कीजिये । प्रभो ! जगन्नाथ ! अत्यन्त उग्र स्वभाववाले महाबली मुर नामक दैत्य ने इन सम्पूर्ण देवताओं को जीतकर स्वर्ग से बाहर निकाल दिया है । भगवन् ! देवदेवेश्वर ! शरणागतवत्सल ! देवता भयभीत होकर आपकी शरण में आये हैं । दानवों का विनाश करनेवाले कमलनयन ! भक्तवत्सल ! देवदेवेश्वर ! जनार्दन ! हमारी रक्षा कीजिये... रक्षा कीजिये । भगवन् ! शरण में आये हुए देवताओं की सहायता कीजिये ।

इन्द्र की बात सुनकर भगवान विष्णु बोले : देवराज ! यह दानव कैसा है ? उसका रुप और बल

कैसा है तथा उस दुष्ट के रहने का स्थान कहाँ है ?

इन्द्र बोले: देवेश्वर ! पूर्वकाल में ब्रह्माजी के वंश में तालजंघ नामक एक महान असुर उत्पन्न हुआ था, जो अत्यन्त भयंकर था । उसका पुत्र मुर दानव के नाम से विख्यात है । वह भी अत्यन्त उत्कट, महापराक्रमी और देवताओं के लिए भयंकर है । चन्द्रावती नाम से प्रसिद्ध एक नगरी है, उसीमें स्थान बनाकर वह निवास करता है । उस दैत्य ने समस्त देवताओं को परास्त करके उन्हें स्वर्गलोक से बाहर कर दिया है । उसने एक दूसरे ही इन्द्र को स्वर्ग के सिंहासन पर बैठाया है । अग्नि, चन्द्रमा, सूर्य, वायु तथा वरुण भी उसने दूसरे ही बनाये हैं । जनार्दन ! मैं सच्ची बात बता रहा हूँ । उसने सब कोई दूसरे ही कर लिये हैं । देवताओं को तो उसने उनके प्रत्येक स्थान से वंचित कर दिया है ।

इन्द्र की यह बात सुनकर भगवान जनार्दन को बड़ा क्रोध आया । उन्होंने देवताओं को साथ लेकर चन्द्रावती नगरी में प्रवेश किया । भगवान गदाधर ने देखा कि "दैत्यराज बारंबार गर्जना कर रहा है और उससे परास्त होकर सम्पूर्ण देवता दसों दिशाओं में भाग रहे हैं ।' अब वह दानव भगवान विष्णु को देखकर बोला : 'खड़ा रह ... खड़ा रह ।' उसकी यह ललकार सुनकर भगवान के नेत्र क्रोध से लाल हो गये । वे बोले : ' अरे दुराचारी दानव ! मेरी इन भुजाओं को देख ।' यह कहकर श्रीविष्णु ने अपने दिव्य बाणों से सामने आये हुए दुष्ट दानवों को मारना आरम्भ किया । दानव भय से विह्वल हो उठे । पाण्ड्डनन्दन ! तत्पश्चात् श्रीविष्णु ने दैत्य सेना पर चक्र का प्रहार किया । उससे छिन्न भिन्न होकर सैकड़ो योद्धा मौत के मुख में चले गये ।

इसके बाद भगवान मधुसूदन बदरिकाश्रम को चले गये । वहाँ सिंहावती नाम की गुफा थी, जो बारह योजन लम्बी थी । पाण्ड्डनन्दन ! उस गुफा में एक ही दरवाजा था । भगवान विष्णु उसीमें सो गये । वह दानव मुर भगवान को मार डालने के उद्योग में उनके पीछे पीछे तो लगा ही था । अतः उसने भी उसी गुफा में प्रवेश किया । वहाँ भगवान को सोते देख उसे बड़ा हर्ष हुआ । उसने सोचा : 'यह दानवों को भय देनेवाला देवता है । अतः निःसन्देह इसे मार डालूँगा ।' युधिष्ठिर ! दानव के इस प्रकार विचार करते ही भगवान विष्णु के शरीर से एक कन्या प्रकट हुई, जो बड़ी ही रुपवती, सौभाग्यशालिनी तथा दिव्य अस्त्र शस्त्रों से सुसज्जित थी । वह भगवान के तेज के अंश से उत्पन्न हुई थी । उसका बल और पराक्रम महान था । युधिष्ठिर ! दानवराज मुर ने उस कन्या को देखा । कन्या ने युद्ध का विचार करके दानव के साथ युद्ध के लिए याचना की । युद्ध छिड़ गया । कन्या सब प्रकार की युद्धकला में निपुण थी । वह मुर नामक महान असुर उसके हुंकारमात्र से राख का ढेर हो गया । दानव के मारे जाने पर भगवान जाग उठे । उन्होंने दानव को धरती पर इस प्रकार निष्प्राण पड़ा देखकर कन्या से पूछा : 'मेरा यह शत्रु अत्यन्त उग्र और भयंकर था । किसने इसका वध किया है ?'

कन्या बोली: स्वामिन् ! आपके ही प्रसाद से मैंने इस महादैत्य का वध किया है।

श्रीभगवान ने कहा : कल्याणी ! तुम्हारे इस कर्म से तीनों लोकों के मुनि और देवता आनन्दित हुए हैं। अतः तुम्हारे मन में जैसी इच्छा हो, उसके अनुसार मुझसे कोई वर माँग लो । देवदुर्लभ होने पर भी वह वर मैं तुम्हें दूँगा, इसमें तनिक भी संदेह नहीं है ।

वह कन्या साक्षात् एकादशी ही थी।

उसने कहा: 'प्रभो ! यदि आप प्रसन्न हैं तो मैं आपकी कृपा से सब तीर्थों में प्रधान, समस्त विघ्नों का नाश करनेवाली तथा सब प्रकार की सिद्धि देनेवाली देवी होऊँ । जनार्दन ! जो लोग आपमें भक्ति रखते हुए मेरे दिन को उपवास करेंगे, उन्हें सब प्रकार की सिद्धि प्राप्त हो । माधव ! जो लोग उपवास, नक्त भोजन अथवा एकभुक्त करके मेरे व्रत का पालन करें, उन्हें आप धन, धर्म और मोक्ष प्रदान कीजिये ।'

श्रीविष्णु बोले: कल्याणी ! तुम जो कुछ कहती हो, वह सब पूर्ण होगा ।

भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं : युधिष्ठिर ! ऐसा वर पाकर महाव्रता एकादशी बहुत प्रसन्न हुई । दोनों पक्षों की एकादशी समान रुप से कल्याण करनेवाली है । इसमें शुक्ल और कृष्ण का भेद नहीं करना चाहिए । यदि उदयकाल में थोड़ी सी एकादशी, मध्य में पूरी द्वादशी और अन्त में किंचित् त्रयोदशी हो तो वह 'त्रिस्पृशा एकादशी' कहलाती है । वह भगवान को बहुत ही प्रिय है । यदि एक 'त्रिस्पृशा एकादशी' को उपवास कर लिया जाय तो एक हजार एकादशी व्रतों का फल प्राप्त होता है तथा इसी प्रकार द्वादशी में पारण करने पर हजार गुना फल माना गया है । अष्टमी, एकादशी, षष्ठी, तृतीय और चतुर्दशी - ये यदि पूर्वतिथि से विद्ध हों तो उनमें व्रत नहीं करना चाहिए । परवर्तिनी तिथि से युक्त होने पर ही इनमें उपवास का विधान है । पहले दिन में और रात में भी एकादशी हो तथा दूसरे दिन केवल प्रातः काल एकदण्ड एकादशी रहे तो पहली तिथि का परित्याग करके दूसरे दिन की द्वादशीयुक्त एकादशी को ही उपवास करना चाहिए । यह विधि मैंने दोनों पक्षों की एकादशी के लिए बतायी है ।

जो मनुष्य एकादशी को उपवास करता है, वह वैकुण्ठधाम में जाता है, जहाँ साक्षात् भगवान गरुड़ध्वज विराजमान रहते हैं । जो मानव हर समय एकादशी के माहात्मय का पाठ करता है, उसे हजार गौदान के पुण्य का फल प्राप्त होता है । जो दिन या रात में भक्तिपूर्वक इस माहात्म्य का श्रवण करते हैं, वे निःसंदेह ब्रह्महत्या आदि पापों से मुक्त हो जाते हैं । एकादशी के समान पापनाशक व्रत दूसरा कोई नहीं है ।

मोक्षदा एकादशी

युधिष्ठिर बोले : देवदेवेश्वर ! मार्गशीर्ष मास के शुक्लपक्ष में कौन सी एकादशी होती है ? उसकी क्या विधि है तथा उसमें किस देवता का पूजन किया जाता है? स्वामिन् ! यह सब यथार्थ रुप से बताइये ।

श्रीकृष्ण ने कहा : नृपश्रेष्ठ ! मार्गशीर्ष मास के शुक्लपक्ष की एकादशी का वर्णन करुँगा, जिसके श्रवणमात्र से वाजपेय यज्ञ का फल मिलता है । उसका नाम 'मोक्षदा एकादशी' है जो सब पापों का अपहरण करनेवाली है । राजन् ! उस दिन यत्नपूर्वक तुलसी की मंजरी तथा धूप दीपादि से भगवान दामोदर का पूजन करना चाहिए । पूर्वाक्त विधि से ही दशमी और एकादशी के नियम का पालन करना उचित है । मोक्षदा एकादशी बड़े बड़े पातकों का नाश करनेवाली है । उस दिन रात्रि में मेरी प्रसन्न्ता के लिए नृत्य, गीत और स्तुति के द्वारा जागरण करना चाहिए । जिसके पितर पापवश नीच योनि में पड़े हों, वे इस एकादशी का व्रत करके इसका पुण्यदान अपने पितरों को करें तो पितर मोक्ष को प्राप्त होते हैं । इसमें तनिक भी संदेह नहीं है ।
पूर्वकाल की बात है, वैष्णवों से विभूषित परम रमणीय चम्पक नगर में वैखानस नामक राजा रहते थे । वे अपनी प्रजा का पुत्र की भाँति पालन करते थे । इस प्रकार राज्य करते हुए राजा ने एक दिन रात को स्वप्न में अपने पितरों को नीच योनि में पड़ा हुआ देखा । उन सबको इस अवस्था में देखकर राजा के मन में बड़ा विस्मय हुआ और प्रात: काल ब्राह्मणों से उन्होंने उस स्वप्न का सारा हाल कह सुनाया ।

राजा बोले : ब्रह्माणो ! मैने अपने पितरों को नरक में गिरा हुआ देखा है । वे बारंबार रोते हुए मुझसे यों कह रहे थे कि : 'तुम हमारे तनुज हो, इसलिए इस नरक समुद्र से हम लोगों का उद्धार करो। ' द्विजवरो ! इस रुप में मुझे पितरों के दर्शन हुए हैं इससे मुझे चैन नहीं मिलता । क्या करुँ ? कहाँ जाऊँ? मेरा हृदय रुँधा जा रहा है । द्विजोत्तमो ! वह व्रत, वह तप और वह योग, जिससे मेरे पूर्वज तत्काल नरक से छुटकारा पा जायें, बताने की कृपा करें । मुझ बलवान तथा साहसी पुत्र के जीते जी मेरे माता पिता घोर नरक में पड़े हुए हैं ! अत: ऐसे पुत्र से क्या लाभ है ?

ब्राह्मण बोले : राजन् ! यहाँ से निकट ही पर्वत मुनि का महान आश्रम है । वे भूत और भविष्य के भी ज्ञाता हैं । नृपश्रेष्ठ ! आप उन्हींके पास चले जाइये ।

ब्राह्मणों की बात सुनकर महाराज वैखानस शीघ्र ही पर्वत मुनि के आश्रम पर गये और वहाँ उन मुनिश्रेष्ठ को देखकर उन्होंने दण्डवत् प्रणाम करके मुनि के चरणों का स्पर्श किया । मुनि ने भी राजा से राज्य के सातों अंगों की कुशलता पूछी ।

राजा बोले: स्वामिन् ! आपकी कृपा से मेरे राज्य के सातों अंग सकुशल हैं किन्तु मैंने स्वप्न में

देखा है कि मेरे पितर नरक में पड़े हैं । अत: बताइये कि किस पुण्य के प्रभाव से उनका वहाँ से छुटकारा होगा ?

राजा की यह बात सुनकर मुनिश्रेष्ठ पर्वत एक मुहूर्त तक ध्यानस्थ रहे । इसके बाद वे राजा से बोले :

'महाराज! मार्गशीर्ष के शुक्लपक्ष में जो 'मोक्षदा' नाम की एकादशी होती है, तुम सब लोग उसका व्रत करो और उसका पुण्य पितरों को दे डालो । उस पुण्य के प्रभाव से उनका नरक से उद्धार हो जायेगा ।'

भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं : युधिष्ठिर ! मुनि की यह बात सुनकर राजा पुन: अपने घर लौट आये । जब उत्तम मार्गशीर्ष मास आया, तब राजा वैखानस ने मुनि के कथनानुसार 'मोक्षदा एकादशी' का व्रत करके उसका पुण्य समस्त पितरोंसहित पिता को दे दिया । पुण्य देते ही क्षणभर में आकाश से फूलों की वर्षा होने लगी । वैखानस के पिता पितरोंसहित नरक से छुटकारा पा गये और आकाश में आकर राजा के प्रति यह पवित्र वचन बोले: 'बेटा ! तुम्हारा कल्याण हो ।' यह कहकर वे स्वर्ग में चले गये ।

राजन् ! जो इस प्रकार कल्याणमयी ''मोक्षदा एकादशी' का व्रत करता है, उसके पाप नष्ट हो जाते हैं और मरने के बाद वह मोक्ष प्राप्त कर लेता है । यह मोक्ष देनेवाली 'मोक्षदा एकादशी' मनुष्यों के लिए चिन्तामणि के समान समस्त कामनाओं को पूर्ण करनेवाली है । इस माहात्मय के पढ़ने और सुनने से वाजपेय यज्ञ का फल मिलता है ।

सफला एकादशी

युधिष्ठिर ने पूछा : स्वामिन् ! पौष मास के कृष्णपक्ष (गुज., महा. के लिए मार्गशीर्ष) में जो एकादशी होती है, उसका क्या नाम है? उसकी क्या विधि है तथा उसमें किस देवता की पूजा की जाती है ? यह बताइये ।

भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं : राजेन्द्र ! बड़ी बड़ी दक्षिणावाले यज्ञों से भी मुझे उतना संतोष नहीं होता, जितना एकादशी व्रत के अनुष्ठान से होता है । पौष मास के कृष्णपक्ष में 'सफला' नाम की एकादशी होती है । उस दिन विधिपूर्वक भगवान नारायण की पूजा करनी चाहिए । जैसे नागों में शेषनाग, पक्षियों में गरुड़ तथा देवताओं में श्रीविष्णु श्रेष्ठ हैं, उसी प्रकार सम्पूर्ण व्रतों में एकादशी तिथि श्रेष्ठ है ।

राजन् ! 'सफला एकादशी' को नाम मंत्रों का उच्चारण करके नारियल के फल, सुपारी, बिजौरा तथा

जमीरा नींबू, अनार, सुन्दर आँवला, लौंग, बेर तथा विशेषत: आम के फलों और धूप दीप से श्रीहरि का पूजन करे । 'सफला एकादशी' को विशेष रुप से दीप दान करने का विधान है । रात को वैष्णव पुरुषों के साथ जागरण करना चाहिए । जागरण करनेवाले को जिस फल की प्राप्ति होती है, वह हजारों वर्ष तपस्या करने से भी नहीं मिलता ।

नृपश्रेष्ठ ! अब 'सफला एकादशी' की शुभकारिणी कथा सुनो । चम्पावती नाम से विख्यात एक पुरी है, जो कभी राजा माहिष्मत की राजधानी थी । राजर्षि माहिष्मत के पाँच पुत्र थे । उनमें जो ज्येष्ठ था, वह सदा पापकर्म में ही लगा रहता था । परस्त्रीगामी और वेश्यासक्त था । उसने पिता के धन को पापकर्म में ही खर्च किया । वह सदा दुराचारपरायण तथा वैष्णवों और देवताओं की निन्दा किया करता था । अपने पुत्र को ऐसा पापाचारी देखकर राजा माहिष्मत ने राजकुमारों में उसका नाम लुम्भक रख दिया। फिर पिता और भाईयों ने मिलकर उसे राज्य से बाहर निकाल दिया । लुम्भक गहन वन में चला गया । वहीं रहकर उसने प्राय: समूचे नगर का धन लूट लिया । एक दिन जब वह रात में चोरी करने के लिए नगर में आया तो सिपाहियों ने उसे पकड़ लिया । किन्तु जब उसने अपने को राजा माहिष्मत का पुत्र बतलाया तो सिपाहियों ने उसे छोड़ दिया । फिर वह वन में लौट आया और मांस तथा वृक्षों के फल खाकर जीवन निर्वाह करने लगा । उस दुष्ट का विश्राम स्थान पीपल वृक्ष बहुत वर्षों पुराना था । उस वन में वह वृक्ष एक महान देवता माना जाता था । पापबुद्धि लुम्भक वहीं निवास करता था ।

एक दिन किसी संचित पुण्य के प्रभाव से उसके द्वारा एकादशी के व्रत का पालन हो गया । पौष मास में कृष्णपक्ष की दशमी के दिन पापिष्ठ लुम्भक ने वृक्षों के फल खाये और वस्त्रहीन होने के कारण रातभर जाड़े का कष्ट भोगा । उस समय न तो उसे नींद आयी और न आराम ही मिला । वह निष्प्राण सा हो रहा था । सूर्योदय होने पर भी उसको होश नहीं आया । 'सफला एकादशी' के दिन भी लुम्भक बेहोश पड़ा रहा । दोपहर होने पर उसे चेतना प्राप्त हुई । फिर इधर उधर दृष्टि डालकर वह आसन से उठा और लँगड़े की भाँति लड़खड़ाता हुआ वन के भीतर गया । वह भूख से दुर्बल और पीड़ित हो रहा था । राजन् ! लुम्भक बहुत से फल लेकर जब तक विश्राम स्थल पर लौटा, तब तक सूर्यदेव अस्त हो गये । तब उसने उस पीपल वृक्ष की जड़ में बहुत से फल निवेदन करते हुए कहा: 'इन फलों से लक्ष्मीपति भगवान विष्णु संतुष्ट हों ।' यों कहकर लुम्भक ने रातभर नींद नहीं ली । इस प्रकार अनायास ही उसने इस व्रत का पालन कर लिया । उस समय सहसा आकाशवाणी हुई: 'राजकुमार ! तुम 'सफला एकादशी' के प्रसाद से राज्य और पुत्र प्राप्त करोगे ।' 'बहुत अच्छा' कहकर उसने वह वरदान स्वीकार किया । इसके बाद उसका रुप दिव्य हो गया । तबसे उसकी उत्तम बुद्धि भगवान विष्णु के भजन में लग गयी । दिव्य आभूषणों से सुशोभित होकर उसने निष्कण्टक राज्य प्राप्त किया और पंद्रह वर्षों तक वह उसका संचालन करता रहा । उसको मनोज्ञ नामक पुत्र उत्पन्न हुआ । जब वह बड़ा हुआ, तब लुम्भक ने तुरंत ही राज्य की ममता छोड़कर उसे पुत्र को सौंप दिया और वह स्वयं भगवान श्रीकृष्ण के समीप चला गया, जहाँ जाकर मनुष्य कभी शोक में नहीं पड़ता ।

राजन् ! इस प्रकार जो 'सफला एकादशी' का उत्तम व्रत करता है, वह इस लोक में सुख भोगकर मरने के पश्चात् मोक्ष को प्राप्त होता है । संसार में वे मनुष्य धन्य हैं, जो 'सफला एकादशी' के व्रत में लगे रहते हैं, उन्हीं का जन्म सफल है । महाराज! इसकी महिमा को पढ़ने, सुनने तथा उसके अनुसार आचरण करने से मनुष्य राजसूय यज्ञ का फल पाता है ।

पुत्रदा एकादशी

युधिष्ठिर बोले: श्रीकृष्ण ! कृपा करके पौष मास के शुक्लपक्ष की एकादशी का माहात्म्य बतलाइये । उसका नाम क्या है? उसे करने की विधि क्या है ? उसमें किस देवता का पूजन किया जाता है ?

भगवान श्रीकृष्ण ने कहा: राजन्! पौष मास के शुक्लपक्ष की जो एकादशी है, उसका नाम 'पुत्रदा' है ।
'पुत्रदा एकादशी' को नाम-मंत्रों का उच्चारण करके फलों के द्वारा श्रीहरि का पूजन करे । नारियल के फल, सुपारी, बिजौरा नींबू, जमीरा नींबू, अनार, सुन्दर आँवला, लौंग, बेर तथा विशेषत: आम के फलों से देवदेवेश्वर श्रीहरि की पूजा करनी चाहिए । इसी प्रकार धूप दीप से भी भगवान की अर्चना करे ।

'पुत्रदा एकादशी' को विशेष रुप से दीप दान करने का विधान है । रात को वैष्णव पुरुषों के साथ जागरण करना चाहिए । जागरण करनेवाले को जिस फल की प्राप्ति होति है, वह हजारों वर्ष तक तपस्या करने से भी नहीं मिलता । यह सब पापों को हरनेवाली उत्तम तिथि है ।

चराचर जगतसहित समस्त त्रिलोकी में इससे बढ़कर दूसरी कोई तिथि नहीं है । समस्त कामनाओं तथा सिद्धियों के दाता भगवान नारायण इस तिथि के अधिदेवता हैं ।

पूर्वकाल की बात है, भद्रावतीपुरी में राजा सुकेतुमान राज्य करते थे । उनकी रानी का नाम चम्पा था । राजा को बहुत समय तक कोई वंशधर पुत्र नहीं प्राप्त हुआ । इसलिए दोनों पति पत्नी सदा चिन्ता और शोक में डूबे रहते थे । राजा के पितर उनके दिये हुए जल को शोकोच्छवास से गरम करके पीते थे । 'राजा के बाद और कोई ऐसा नहीं दिखायी देता, जो हम लोगों का तर्पण करेगा ...' यह सोच सोचकर पितर दु:खी रहते थे ।

एक दिन राजा घोड़े पर सवार हो गहन वन में चले गये । पुरोहित आदि किसीको भी इस बात का पता न था । मृग और पक्षियों से सेवित उस सघन कानन में राजा भ्रमण करने लगे । मार्ग में कहीं सियार की बोली सुनायी पड़ती थी तो कहीं उल्लुओं की । जहाँ तहाँ भालू और मृग दृष्टिगोचर हो रहे थे । इस प्रकार घूम घूमकर राजा वन की शोभा देख रहे थे, इतने में दोपहर हो गयी । राजा को भूख और प्यास सताने लगी । वे जल की खोज में इधर उधर भटकने लगे । किसी पुण्य के प्रभाव से उन्हें एक उत्तम सरोवर दिखायी दिया, जिसके समीप मुनियों के बहुत से आश्रम थे । शोभाशाली नरेश ने उन आश्रमों की ओर देखा । उस समय शुभ की सूचना देनेवाले शकुन होने लगे । राजा का दाहिना नेत्र और दाहिना हाथ फड़कने लगा, जो उत्तम फल की सूचना

दे रहा था । सरोवर के तट पर बहुत से मुनि वेदपाठ कर रहे थे । उन्हें देखकर राजा को बड़ा हर्ष हुआ । वे घोड़े से उतरकर मुनियों के सामने खड़े हो गये और पृथक् पृथक् उन सबकी वन्दना करने लगे । वे मुनि उत्तम व्रत का पालन करनेवाले थे । जब राजा ने हाथ जोड़कर बारंबार दण्डवत् किया, तब मुनि बोले : 'राजन् ! हम लोग तुम पर प्रसन्न हैं।'

राजा बोले: आप लोग कौन हैं ? आपके नाम क्या हैं तथा आप लोग किसलिए यहाँ एकत्रित हुए हैं? कृपया यह सब बताइये ।
मुनि बोले: राजन् ! हम लोग विश्वेदेव हैं । यहाँ स्नान के लिए आये हैं । माघ मास निकट आया है । आज से पाँचवें दिन माघ का स्नान आरम्भ हो जायेगा । आज ही 'पुत्रदा' नाम की एकादशी है,जो व्रत करनेवाले मनुष्यों को पुत्र देती है ।

राजा ने कहा: विश्वेदेवगण ! यदि आप लोग प्रसन्न हैं तो मुझे पुत्र दीजिये।

मुनि बोले: राजन्! आज 'पुत्रदा' नाम की एकादशी है। इसका व्रत बहुत विख्यात है। तुम आज इस उत्तम व्रत का पालन करो । महाराज! भगवान केशव के प्रसाद से तुम्हें पुत्र अवश्य प्राप्त होगा ।

भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं: युधिष्ठिर ! इस प्रकार उन मुनियों के कहने से राजा ने उक्त उत्तम व्रत का पालन किया । महर्षियों के उपदेश के अनुसार विधिपूर्वक 'पुत्रदा एकादशी' का अनुष्ठान किया । फिर द्वादशी को पारण करके मुनियों के चरणों में बारंबार मस्तक झुकाकर राजा अपने घर आये । तदनन्तर रानी ने गर्भधारण किया । प्रसवकाल आने पर पुण्यकर्मा राजा को तेजस्वी पुत्र प्राप्त हुआ, जिसने अपने गुणों से पिता को संतुष्ट कर दिया । वह प्रजा का पालक हुआ ।

इसलिए राजन्! 'पुत्रदा' का उत्तम व्रत अवश्य करना चाहिए । मैंने लोगों के हित के लिए तुम्हारे सामने इसका वर्णन किया है । जो मनुष्य एकाग्रचित्त होकर 'पुत्रदा एकादशी' का व्रत करते हैं, वे इस लोक में पुत्र पाकर मृत्यु के पश्चात् स्वर्गगामी होते हैं। इस माहात्म्य को पढ़ने और सुनने से अग्निष्टोम यज्ञ का फल मिलता है ।

षटतिला एकादशी

युधिष्ठिर ने श्रीकृष्ण से पूछा: भगवन् ! माघ मास के कृष्णपक्ष में कौन सी एकादशी होती है? उसके लिए कैसी विधि है तथा उसका फल क्या है ? कृपा करके ये सब बातें हमें बताइये ।

श्रीभगवान बोले: नृपश्रेष्ठ ! माघ (गुजरात महाराष्ट्र के अनुसार पौष) मास के कृष्णपक्ष की एकादशी 'षटतिला' के नाम से विख्यात है, जो सब पापों का नाश करनेवाली है । मुनिश्रेष्ठ पुलस्त्य ने इसकी जो पापहारिणी कथा दाल्भ्य से कही थी, उसे सुनो ।

दाल्भ्य ने पूछा: ब्रह्मन्! मृत्युलोक में आये हुए प्राणी प्राय: पापकर्म करते रहते हैं । उन्हें नरक में न जाना पड़े इसके लिए कौन सा उपाय है? बताने की कृपा करें ।

पुलस्त्यजी बोले: महाभाग ! माघ मास आने पर मनुष्य को चाहिए कि वह नहा धोकर पवित्र हो इन्द्रियसंयम रखते हुए काम, क्रोध, अहंकार ,लोभ और चुगली आदि बुराइयों को त्याग दे । देवाधिदेव भगवान का स्मरण करके जल से पैर धोकर भूमि पर पड़े हुए गोबर का संग्रह करे । उसमें तिल और कपास मिलाकर एक सौ आठ पिंडिकाएँ बनाये । फिर माघ में जब आर्द्रा या मूल नक्षत्र आये, तब कृष्णपक्ष की एकादशी करने के लिए नियम ग्रहण करें । भली भाँति स्नान करके पवित्र हो शुद्ध भाव से देवाधिदेव श्रीविष्णु की पूजा करें । कोई भूल हो जाने पर श्रीकृष्ण का नामोच्चारण करें । रात को जागरण और होम करें । चन्दन, अरगजा, कपूर, नैवेघ आदि सामग्री से शंख, चक्र और गदा धारण करनेवाले देवदेवेश्वर श्रीहरि की पूजा करें । तत्पश्चात् भगवान का स्मरण करके बारंबार श्रीकृष्ण नाम का उच्चारण करते हुए कुम्हड़े, नारियल अथवा बिजौरे के फल से भगवान को विधिपूर्वक पूजकर अर्ध्य दें । अन्य सब सामग्रियों के अभाव में सौ सुपारियों के द्वारा भी पूजन और अर्ध्यदान किया जा सकता है । अर्ध्य का मंत्र इस प्रकार है:

कृष्ण कृष्ण कृपालुस्त्वमगतीनां गतिर्भव ।
संसारार्णवमग्नानां प्रसीद पुरुषोत्तम ॥
नमस्ते पुण्डरीकाक्ष नमस्ते विश्वभावन ।
सुब्रह्मण्य नमस्तेऽस्तु महापुरुष पूर्वज ॥
गृहाणार्ध्यं मया दत्तं लक्ष्म्या सह जगत्पते ।

'सच्चिदानन्दस्वरुप श्रीकृष्ण ! आप बड़े दयालु हैं । हम आश्रयहीन जीवों के आप आश्रयदाता होइये । हम संसार समुद्र में डूब रहे हैं, आप हम पर प्रसन्न होइये । कमलनयन ! विश्वभावन ! सुब्रह्मण्य ! महापुरुष ! सबके पूर्वज ! आपको नमस्कार है ! जगत्पते ! मेरा दिया हुआ अर्ध्य आप

लक्ष्मीजी के साथ स्वीकार करें ।'
तत्पश्चात् ब्राह्मण की पूजा करें । उसे जल का घड़ा, छाता, जूता और वस्त्र दान करें । दान करते समय ऐसा कहें : 'इस दान के द्वारा भगवान श्रीकृष्ण मुझ पर प्रसन्न हों ।' अपनी शक्ति के अनुसार श्रेष्ठ ब्राह्मण को काली गौ का दान करें । द्विजश्रेष्ठ ! विद्वान पुरुष को चाहिए कि वह तिल से भरा हुआ पात्र भी दान करे । उन तिलों के बोने पर उनसे जितनी शाखाएँ पैदा हो सकती हैं, उतने हजार वर्षों तक वह स्वर्गलोक में प्रतिष्ठित होता है । तिल से स्नान होम करे, तिल का उबटन लगाये, तिल मिलाया हुआ जल पीये, तिल का दान करे और तिल को भोजन के काम में ले ।'

इस प्रकार हे नृपश्रेष्ठ ! छः कामों में तिल का उपयोग करने के कारण यह एकादशी 'षटतिला' कहलाती है, जो सब पापों का नाश करनेवाली है ।

जया एकादशी

युधिष्ठिर ने भगवान श्रीकृष्ण से पूछा : भगवन् ! कृपा करके यह बताइये कि माघ मास के शुक्लपक्ष में कौन सी एकादशी होती है, उसकी विधि क्या है तथा उसमें किस देवता का पूजन किया जाता है ?

भगवान श्रीकृष्ण बोले : राजेन्द्र ! माघ मास के शुक्लपक्ष में जो एकादशी होती है, उसका नाम 'जया' है । वह सब पापों को हरनेवाली उत्तम तिथि है । पवित्र होने के साथ ही पापों का नाश करनेवाली तथा मनुष्यों को भाग और मोक्ष प्रदान करनेवाली है । इतना ही नहीं , वह ब्रह्महत्या जैसे पाप तथा पिशाचत्व का भी विनाश करनेवाली है । इसका व्रत करने पर मनुष्यों को कभी प्रेतयोनि में नहीं जाना पड़ता । इसलिए राजन् ! प्रयत्नपूर्वक 'जया' नाम की एकादशी का व्रत करना चाहिए ।

एक समय की बात है । स्वर्गलोक में देवराज इन्द्र राज्य करते थे । देवगण पारिजात वृक्षों से युक्त नंदनवन में अप्सराओं के साथ विहार कर रहे थे । पचास करोड़ गन्धर्वों के नायक देवराज इन्द्र ने स्वेच्छानुसार वन में विहार करते हुए बड़े हर्ष के साथ नृत्य का आयोजन किया । गन्धर्व उसमें गान कर रहे थे, जिनमें पुष्पदन्त, चित्रसेन तथा उसका पुत्र - ये तीन प्रधान थे । चित्रसेन की स्त्री का नाम मालिनी था । मालिनी से एक कन्या उत्पन्न हुई थी, जो पुष्पवन्ती के नाम से विख्यात थी । पुष्पदन्त गन्धर्व का एक पुत्र था, जिसको लोग माल्यवान कहते थे । माल्यवान पुष्पवन्ती के रुप पर अत्यन्त मोहित था । ये दोनों भी इन्द्र के संतोषार्थ नृत्य करने के लिए आये थे । इन दोनों का गान हो रहा था । इनके साथ अप्सराएँ भी थीं । परस्पर अनुराग के कारण ये दोनों मोह के वशीभूत हो गये । चित्त में भ्रान्ति आ गयी इसलिए वे शुद्ध गान न गा सके । कभी ताल भंग हो जाता था तो कभी गीत बंद हो जाता था । इन्द्र ने इस प्रमाद पर विचार किया और इसे अपना अपमान समझकर वे कुपित हो गये ।

अत: इन दोनों को शाप देते हुए बोले : 'ओ मूर्खो ! तुम दोनों को धिक्कार है ! तुम लोग पतित और मेरी आज्ञाभंग करनेवाले हो, अत: पति पत्नी के रुप में रहते हुए पिशाच हो जाओ ।'

इन्द्र के इस प्रकार शाप देने पर इन दोनों के मन में बड़ा दु:ख हुआ । वे हिमालय पर्वत पर चले गये और पिशाचयोनि को पाकर भयंकर दु:ख भोगने लगे । शारीरिक पातक से उत्पन्न ताप से पीड़ित होकर दोनों ही पर्वत की कन्दराओं में विचरते रहते थे । एक दिन पिशाच ने अपनी पत्नी पिशाची से कहा : 'हमने कौन सा पाप किया है, जिससे यह पिशाचयोनि प्राप्त हुई है ? नरक का कष्ट अत्यन्त भयंकर है तथा पिशाचयोनि भी बहुत दु:ख देनेवाली है । अत: पूर्ण प्रयत्न करके पाप से बचना चाहिए ।'

इस प्रकार चिन्तामग्न होकर वे दोनों दु:ख के कारण सूखते जा रहे थे । दैवयोग से उन्हें माघ मास के शुक्लपक्ष की एकादशी की तिथि प्राप्त हो गयी । 'जया' नाम से विख्यात वह तिथि सब तिथियों में उत्तम है । उस दिन उन दोनों ने सब प्रकार के आहार त्याग दिये, जल पान तक नहीं किया । किसी जीव की हिंसा नहीं की, यहाँ तक कि खाने के लिए फल तक नहीं काटा । निरन्तर दु:ख से युक्त होकर वे एक पीपल के समीप बैठे रहे । सूर्यास्त हो गया । उनके प्राण हर लेने वाली भयंकर रात्रि उपस्थित हुई । उन्हें नींद नहीं आयी । वे रति या और कोई सुख भी नहीं पा सके ।

सूर्यादय हुआ, द्वादशी का दिन आया । इस प्रकार उस पिशाच दंपति के द्वारा 'जया' के उत्तम व्रत का पालन हो गया । उन्होंने रात में जागरण भी किया था । उस व्रत के प्रभाव से तथा भगवान विष्णु की शक्ति से उन दोनों का पिशाचत्व दूर हो गया । पुष्पवन्ती और माल्यवान अपने पूर्वरुप में आ गये । उनके हृदय में वही पुराना स्नेह उमड़ रहा था । उनके शरीर पर पहले जैसे ही अलंकार शोभा पा रहे थे ।

वे दोनों मनोहर रुप धारण करके विमान पर बैठे और स्वर्गलोक में चले गये । वहाँ देवराज इन्द्र के सामने जाकर दोनों ने बड़ी प्रसन्नता के साथ उन्हें प्रणाम किया ।

उन्हें इस रुप में उपस्थित देखकर इन्द्र को बड़ा विस्मय हुआ ! उन्होंने पूछा: 'बताओ, किस पुण्य के प्रभाव से तुम दोनों का पिशाचत्व दूर हुआ है? तुम मेरे शाप को प्राप्त हो चुके थे, फिर किस देवता ने तुम्हें उससे छुटकारा दिलाया है?'

माल्यवान बोला : स्वामिन् ! भगवान वासुदेव की कृपा तथा 'जया' नामक एकादशी के व्रत से हमारा पिशाचत्व दूर हुआ है ।

इन्द्र ने कहा : ... तो अब तुम दोनों मेरे कहने से सुधापान करो । जो लोग एकादशी के व्रत में तत्पर और भगवान श्रीकृष्ण के शरणागत होते हैं, वे हमारे भी पूजनीय होते हैं ।

भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं : राजन् ! इस कारण एकादशी का व्रत करना चाहिए । नृपश्रेष्ठ ! 'जया' ब्रह्महत्या का पाप भी दूर करनेवाली है । जिसने 'जया' का व्रत किया है, उसने सब प्रकार के दान दे दिये और सम्पूर्ण यज्ञों का अनुष्ठान कर लिया । इस माहात्म्य के पढ़ने और सुनने से अग्निष्टोम यज्ञ का फल मिलता है ।

विजया एकादशी

युधिष्ठिर ने पूछा: हे वासुदेव! फाल्गुन (गुजरात महाराष्ट्र के अनुसार माघ) के कृष्णपक्ष में किस

नाम की एकादशी होती है और उसका व्रत करने की विधि क्या है? कृपा करके बताइये ।

भगवान श्रीकृष्ण बोले: युधिष्ठिर ! एक बार नारदजी ने ब्रह्माजी से फाल्गुन के कृष्णपक्ष की 'विजया एकादशी' के व्रत से होनेवाले पुण्य के बारे में पूछा था तथा ब्रह्माजी ने इस व्रत के बारे में उन्हें जो कथा और विधि बतायी थी, उसे सुनो :

ब्रह्माजी ने कहा : नारद ! यह व्रत बहुत ही प्राचीन, पवित्र और पाप नाशक है । यह एकादशी राजाओं को विजय प्रदान करती है, इसमें तनिक भी संदेह नहीं है ।

त्रेतायुग में मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्रजी जब लंका पर चढ़ाई करने के लिए समुद्र के किनारे पहुँचे, तब उन्हें समुद्र को पार करने का कोई उपाय नहीं सूझ रहा था । उन्होंने लक्ष्मणजी से पूछा : 'सुमित्रानन्दन ! किस उपाय से इस समुद्र को पार किया जा सकता है ? यह अत्यन्त अगाध और भयंकर जल जन्तुओं से भरा हुआ है । मुझे ऐसा कोई उपाय नहीं दिखायी देता, जिससे इसको सुगमता से पार किया जा सके ।'

लक्ष्मणजी बोले : हे प्रभु ! आप ही आदिदेव और पुराण पुरुष पुरुषोत्तम हैं । आपसे क्या छिपा है? यहाँ से आधे योजन की दूरी पर कुमारी द्वीप में बकदाल्भ्य नामक मुनि रहते हैं । आप उन प्राचीन मुनीश्वर के पास जाकर उन्हींसे इसका उपाय पूछिये ।

श्रीरामचन्द्रजी महामुनि बकदाल्भ्य के आश्रम पहुँचे और उन्होंने मुनि को प्रणाम किया । महर्षि ने प्रसन्न होकर श्रीरामजी के आगमन का कारण पूछा ।

श्रीरामचन्द्रजी बोले : ब्रह्मन् ! मैं लंका पर चढ़ाई करने के उद्धेश्य से अपनी सेनासहित यहाँ आया हूँ । मुने ! अब जिस प्रकार समुद्र पार किया जा सके, कृपा करके वह उपाय बताइये ।

बकदाल्भय मुनि ने कहा : हे श्रीरामजी ! फाल्गुन के कृष्णपक्ष में जो 'विजया' नाम की एकादशी होती है, उसका व्रत करने से आपकी विजय होगी । निश्चय ही आप अपनी वानर सेना के साथ समुद्र को पार कर लेंगे । राजन् ! अब इस व्रत की फलदायक विधि सुनिये :
दशमी के दिन सोने, चाँदी, ताँबे अथवा मिट्टी का एक कलश स्थापित कर उस कलश को जल से भरकर उसमें पल्लव डाल दें । उसके ऊपर भगवान नारायण के सुवर्णमय विग्रह की स्थापना करें । फिर एकादशी के दिन प्रात: काल स्नान करें । कलश को पुन: स्थापित करें । माला, चन्दन, सुपारी तथा नारियल आदि के द्वारा विशेष रुप से उसका पूजन करें । कलश के ऊपर सप्तधान्य और जौ रखें । गन्ध, धूप, दीप और भाँति भाँति के नैवेघ से पूजन करें । कलश के सामने बैठकर उत्तम कथा वार्ता आदि के द्वारा सारा दिन व्यतीत करें और रात में भी वहाँ जागरण करें । अखण्ड व्रत की सिद्धि के लिए घी का दीपक जलायें । फिर द्वादशी के दिन सूर्योदय होने पर उस कलश को किसी जलाशय के समीप (नदी, झरने या पोखर के तट पर)

स्थापित करें और उसकी विधिवत् पूजा करके देव प्रतिमासहित उस कलश को वेदवेत्ता ब्राह्मण के लिए दान कर दें । कलश के साथ ही और भी बड़े बड़े दान देने चाहिए । श्रीराम ! आप अपने सेनापतियों के साथ इसी विधि से प्रयत्नपूर्वक 'विजया एकादशी' का व्रत कीजिये । इससे आपकी विजय होगी ।

ब्रह्माजी कहते हैं : नारद ! यह सुनकर श्रीरामचन्द्रजी ने मुनि के कथनानुसार उस समय 'विजया एकादशी' का व्रत किया । उस व्रत के करने से श्रीरामचन्द्रजी विजयी हुए । उन्होंने संग्राम में रावण को मारा, लंका पर विजय पायी और सीता को प्राप्त किया । बेटा ! जो मनुष्य इस विधि से व्रत करते हैं, उन्हें इस लोक में विजय प्राप्त होती है और उनका परलोक भी अक्षय बना रहता है ।

भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं : युधिष्ठिर ! इस कारण 'विजया' का व्रत करना चाहिए । इस प्रसंग को पढ़ने और सुनने से वाजपेय यज्ञ का फल मिलता है ।

आमलकी एकादशी

युधिष्ठिर ने भगवान श्रीकृष्ण से कहा : श्रीकृष्ण ! मुझे फाल्गुन मास के शुक्लपक्ष की एकादशी का नाम और माहात्म्य बताने की कृपा कीजिये ।

भगवान श्रीकृष्ण बोले: महाभाग धर्मनन्दन ! फाल्गुन मास के शुक्लपक्ष की एकादशी का नाम 'आमलकी' है । इसका पवित्र व्रत विष्णुलोक की प्राप्ति करानेवाला है । राजा मान्धाता ने भी महात्मा वशिष्ठजी से इसी प्रकार का प्रश्न पूछा था, जिसके जवाब में वशिष्ठजी ने कहा था : 'महाभाग ! भगवान विष्णु के थूकने पर उनके मुख से चन्द्रमा के समान कान्तिमान एक बिन्दु प्रकट होकर पृथ्वी पर गिरा । उसीसे आमलक (आँवले) का महान वृक्ष उत्पन्न हुआ, जो सभी वृक्षों का आदिभूत कहलाता है । इसी समय प्रजा की सृष्टि करने के लिए भगवान ने ब्रह्माजी को उत्पन्न किया और ब्रह्माजी ने देवता, दानव, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस, नाग तथा निर्मल अंतःकरण वाले महर्षियों को जन्म दिया । उनमें से देवता और ऋषि उस स्थान पर आये, जहाँ विष्णुप्रिय आमलक का वृक्ष था । महाभाग ! उसे देखकर देवताओं को बड़ा विस्मय हुआ क्योंकि उस वृक्ष के बारे में वे नहीं जानते थे । उन्हें इस प्रकार विस्मित देख आकाशवाणी हुई: 'महर्षियो ! यह सर्वश्रेष्ठ आमलक का वृक्ष है, जो विष्णु को प्रिय है । इसके स्मरणमात्र से गोदान का फल मिलता है । स्पर्श करने से इससे दुगना और फल भक्षण करने से तिगुना पुण्य प्राप्त होता है । यह सब पापों को हरनेवाला वैष्णव वृक्ष है । इसके मूल में विष्णु, उसके ऊपर ब्रह्मा, स्कन्ध में परमेश्वर भगवान रुद्र, शाखाओं में मुनि, टहनियों में देवता, पत्तों में वसु, फूलों में मरुद्गण तथा फलों में समस्त प्रजापति वास करते हैं । आमलक सर्वदेवमय है । अतः विष्णुभक्त पुरुषों के लिए यह परम पूज्य है । इसलिए सदा प्रयत्नपूर्वक आमलक का सेवन करना चाहिए ।'

ऋषि बोले : आप कौन हैं ? देवता हैं या कोई और ? हमें ठीक ठीक बताइये ।

पुन : आकाशवाणी हुई : जो सम्पूर्ण भूतों के कर्त्ता और समस्त भुवनों के स्रष्टा हैं, जिन्हें विद्वान पुरुष भी कठिनता से देख पाते हैं, मैं वही सनातन विष्णु हूँ।

देवाधिदेव भगवान विष्णु का यह कथन सुनकर वे ऋषिगण भगवान की स्तुति करने लगे । इससे भगवान श्रीहरि संतुष्ट हुए और बोले : 'महर्षियो ! तुम्हें कौन सा अभीष्ट वरदान दूँ ?

ऋषि बोले : भगवन् ! यदि आप संतुष्ट हैं तो हम लोगों के हित के लिए कोई ऐसा व्रत बतलाइये, जो स्वर्ग और मोक्षरुपी फल प्रदान करनेवाला हो ।

श्रीविष्णुजी बोले : महर्षियो ! फाल्गुन मास के शुक्लपक्ष में यदि पुष्य नक्षत्र से युक्त एकादशी हो तो वह महान पुण्य देनेवाली और बड़े बड़े पातकों का नाश करनेवाली होती है । इस दिन आँवले

के वृक्ष के पास जाकर वहाँ रात्रि में जागरण करना चाहिए । इससे मनुष्य सब पापों से छुट जाता है और सहस्र गोदान का फल प्राप्त करता है । विप्रगण ! यह व्रत सभी व्रतों में उत्तम है, जिसे मैंने तुम लोगों को बताया है ।

ऋषि बोले : भगवन् ! इस व्रत की विधि बताइये । इसके देवता और मंत्र क्या हैं ? पूजन कैसे करें? उस समय स्नान और दान कैसे किया जाता है?

भगवान श्रीविष्णुजी ने कहा : द्विजवरो ! इस एकादशी को व्रती प्रात:काल दन्तधावन करके यह संकल्प करे कि 'हे पुण्डरीकाक्ष ! हे अच्युत ! मैं एकादशी को निराहार रहकर दुसरे दिन भोजन करुँगा । आप मुझे शरण में रखें ।' ऐसा नियम लेने के बाद पतित, चोर, पाखण्डी, दुराचारी, गुरुपत्नीगामी तथा मर्यादा भंग करनेवाले मनुष्यों से वह वार्तालाप न करे । अपने मन को वश में रखते हुए नदी में, पोखरे में, कुएँ पर अथवा घर में ही स्नान करे । स्नान के पहले शरीर में मिट्टी लगाये ।

मृत्तिका लगाने का मंत्र
अश्वक्रान्ते रथक्रान्ते विष्णुक्रान्ते वसुन्धरे ।
मृत्तिके हर मे पापं जन्मकोटयां समर्जितम् ॥

वसुन्धरे ! तुम्हारे ऊपर अश्व और रथ चला करते हैं तथा वामन अवतार के समय भगवान विष्णु ने भी तुम्हें अपने पैरों से नापा था । मृत्तिके ! मैंने करोड़ों जन्मों में जो पाप किये हैं, मेरे उन सब पापों को हर लो ।'

स्नान का मंत्र
त्वं मात: सर्वभूतानां जीवनं तत्तु रक्षकम्।
स्वेदजोद्भिज्जजातीनां रसानां पतये नम:॥
स्नातोSहं सर्वतीर्थेषु ह्रदप्रस्रवणेषु च्।
नदीषु देवखातेषु इदं स्नानं तु मे भवेत्॥

'जल की अधिष्ठात्री देवी ! मातः ! तुम सम्पूर्ण भूतों के लिए जीवन हो । वही जीवन, जो स्वेदज और उद्भिज्ज जाति के जीवों का भी रक्षक है । तुम रसों की स्वामिनी हो । तुम्हें नमस्कार है । आज मैं सम्पूर्ण तीर्थों, कुण्डों, झरनों, नदियों और देवसम्बन्धी सरोवरों में स्नान कर चुका । मेरा यह स्नान उक्त सभी स्नानों का फल देनेवाला हो ।'

विद्वान पुरुष को चाहिए कि वह परशुरामजी की सोने की प्रतिमा बनवाये । प्रतिमा अपनी शक्ति और धन के अनुसार एक या आधे माशे सुवर्ण की होनी चाहिए । स्नान के पश्चात् घर आकर पूजा और हवन करे । इसके बाद सब प्रकार की सामग्री लेकर आँवले के वृक्ष के पास जाय । वहाँ वृक्ष के चारों ओर की जमीन झाड़ बुहार, लीप पोतकर शुद्ध करे । शुद्ध की हुई भूमि में

मंत्रपाठपूर्वक जल से भरे हुए नवीन कलश की स्थापना करे । कलश में पंचरत्न और दिव्य गन्ध आदि छोड़ दे । श्वेत चन्दन से उसका लेपन करे । उसके कण्ठ में फूल की माला पहनाये । सब प्रकार के धूप की सुगन्ध फैलाये । जलते हुए दीपकों की श्रेणी सजाकर रखे । तात्पर्य यह है कि सब ओर से सुन्दर और मनोहर दृश्य उपस्थित करे । पूजा के लिए नवीन छाता, जूता और वस्त्र भी मँगाकर रखे । कलश के ऊपर एक पात्र रखकर उसे श्रेष्ठ लाजों(खीलों) से भर दे । फिर उसके ऊपर परशुरामजी की मूर्ति (सुवर्ण की) स्थापित करे।

'**विशोकाय नमः**' कहकर उनके चरणों की,
'**विश्वरुपिणे नमः**' से दोनों घुटनों की,
'**उग्राय नमः**' से जाँघो की,
'**दामोदराय नमः**' से कटिभाग की,
'**पधनाभाय नमः**' से उदर की,
'**श्रीवत्सधारिणे नमः**' से वक्षः स्थल की,
'**चक्रिणे नमः**' से बायीं बाँह की,
'**गदिने नमः**' से दाहिनी बाँह की,
'**वैकुण्ठाय नमः**' से कण्ठ की,
'**यज्ञमुखाय नमः**' से मुख की,
'**विशोकनिधये नमः**' से नासिका की,
'**वासुदेवाय नमः**' से नेत्रों की,
'**वामनाय नमः**' से ललाट की,
'**सर्वात्मने नमः**' से संपूर्ण अंगो तथा मस्तक की पूजा करे ।

ये ही पूजा के मंत्र हैं। तदनन्तर भक्तियुक्त चित्त से शुद्ध फल के द्वारा देवाधिदेव परशुरामजी को अर्ध्य प्रदान करे । अर्ध्य का मंत्र इस प्रकार है :

नमस्ते देवदेवेश जामदग्न्य नमोऽस्तु ते ।
गृहाणार्ध्यमिमं दत्तमामलक्या युतं हरे ॥

'देवदेवेश्वर ! जमदग्निनन्दन ! श्री विष्णुस्वरुप परशुरामजी ! आपको नमस्कार है, नमस्कार है । आँवले के फल के साथ दिया हुआ मेरा यह अर्ध्य ग्रहण कीजिये ।'

तदनन्तर भक्तियुक्त चित्त से जागरण करे । नृत्य, संगीत, वाघ, धार्मिक उपाख्यान तथा श्रीविष्णु संबंधी कथा वार्ता आदि के द्वारा वह रात्रि व्यतीत करे । उसके बाद भगवान विष्णु के नाम ले लेकर आमलक वृक्ष की परिक्रमा एक सौ आठ या अट्ठाईस बार करे । फिर सवेरा होने पर श्रीहरि की आरती करे । ब्राह्मण की पूजा करके वहाँ की सब सामग्री उसे निवेदित कर दे ।

परशुरामजी का कलश, दो वस्त्र, जूता आदि सभी वस्तुएँ दान कर दे और यह भावना करे कि : 'परशुरामजी के स्वरुप में भगवान विष्णु मुझ पर प्रसन्न हों ।' तत्पश्चात् आमलक का स्पर्श करके उसकी प्रदक्षिणा करे और स्नान करने के बाद विधिपूर्वक ब्राह्मणों को भोजन कराये । तदनन्तर कुटुम्बियों के साथ बैठकर स्वयं भी भोजन करे ।

सम्पूर्ण तीर्थों के सेवन से जो पुण्य प्राप्त होता है तथा सब प्रकार के दान देने दे जो फल मिलता है, वह सब उपर्युक्त विधि के पालन से सुलभ होता है । समस्त यज्ञों की अपेक्षा भी अधिक फल मिलता है, इसमें तनिक भी संदेह नहीं है । यह व्रत सब व्रतों में उत्तम है ।'

वशिष्ठजी कहते हैं : महाराज ! इतना कहकर देवेश्वर भगवान विष्णु वहीं अन्तर्धान हो गये । तत्पश्चात् उन समस्त महर्षियों ने उक्त व्रत का पूर्णरुप से पालन किया । नृपश्रेष्ठ ! इसी प्रकार तुम्हें भी इस व्रत का अनुष्ठान करना चाहिए ।

भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं : युधिष्ठिर ! यह दुर्धर्ष व्रत मनुष्य को सब पापों से मुक्त करनेवाला है ।

पापमोचनी एकादशी

महाराज युधिष्ठिर ने भगवान श्रीकृष्ण से चैत्र (गुजरात महाराष्ट्र के अनुसार फाल्गुन) मास के कृष्णपक्ष की एकादशी के बारे में जानने की इच्छा प्रकट की तो वे बोले : 'राजेन्द्र ! मैं तुम्हें इस विषय में एक पापनाशक उपाख्यान सुनाऊँगा, जिसे चक्रवर्ती नरेश मान्धाता के पूछने पर महर्षि लोमश ने कहा था ।'

मान्धाता ने पूछा : भगवन् ! मैं लोगों के हित की इच्छा से यह सुनना चाहता हूँ कि चैत्र मास के कृष्णपक्ष में किस नाम की एकादशी होती है, उसकी क्या विधि है तथा उससे किस फल की प्राप्ति होती है? कृपया ये सब बातें मुझे बताइये ।

लोमशजी ने कहा : नृपश्रेष्ठ ! पूर्वकाल की बात है । अप्सराओं से सेवित चैत्ररथ नामक वन में, जहाँ गन्धर्वों की कन्याएँ अपने किंकरो के साथ बाजे बजाती हुई विहार करती हैं, मंजुघोषा नामक अप्सरा मुनिवर मेघावी को मोहित करने के लिए गयी । वे महर्षि चैत्ररथ वन में रहकर ब्रह्मचर्य का पालन करते थे । मंजुघोषा मुनि के भय से आश्रम से एक कोस दूर ही ठहर गयी और सुन्दर ढंग से वीणा बजाती हुई मधुर गीत गाने लगी । मुनिश्रेष्ठ मेघावी घूमते हुए उधर जा निकले और उस सुन्दर अप्सरा को इस प्रकार गान करते देख बरबस ही मोह के वशीभूत हो गये । मुनि की ऐसी अवस्था देख मंजुघोषा उनके समीप आयी और वीणा नीचे रखकर उनका आलिंगन करने लगी । मेघावी भी उसके साथ रमण करने लगे । रात और दिन का भी उन्हें भान न रहा । इस प्रकार उन्हें बहुत दिन व्यतीत हो गये । मंजुघोषा देवलोक में जाने को तैयार हुई । जाते समय उसने मुनिश्रेष्ठ मेघावी से कहा: 'ब्रह्मन् ! अब मुझे अपने देश जाने की आज्ञा दीजिये ।'

मेघावी बोले : देवी ! जब तक सवेरे की संध्या न हो जाय तब तक मेरे ही पास ठहरो ।

अप्सरा ने कहा : विप्रवर ! अब तक न जाने कितनी ही संध्याँए चली गयीं ! मुझ पर कृपा करके बीते हुए समय का विचार तो कीजिये !

लोमशजी ने कहा : राजन् ! अप्सरा की बात सुनकर मेघावी चकित हो उठे । उस समय उन्होंने बीते हुए समय का हिसाब लगाया तो मालूम हुआ कि उसके साथ रहते हुए उन्हें सत्तावन वर्ष हो गये । उसे अपनी तपस्या का विनाश करनेवाली जानकर मुनि को उस पर बड़ा क्रोध आया । उन्होंने शाप देते हुए कहा: 'पापिनी ! तू पिशाची हो जा ।' मुनि के शाप से दग्ध होकर वह विनय से नतमस्तक हो बोली : 'विप्रवर ! मेरे शाप का उद्धार कीजिये । सात वाक्य बोलने या सात पद साथ साथ चलनेमात्र से ही सत्पुरुषों के साथ मैत्री हो जाती है । ब्रह्मन् ! मैं तो आपके साथ अनेक वर्ष व्यतीत किये हैं, अतः स्वामिन् ! मुझ पर कृपा कीजिये ।'

मुनि बोले : भद्रे ! क्या करुँ ? तुमने मेरी बहुत बड़ी तपस्या नष्ट कर डाली है । फिर भी सुनो ।

चैत्र कृष्णपक्ष में जो एकादशी आती है उसका नाम है 'पापमोचनी ।' वह शाप से उद्धार करनेवाली तथा सब पापों का क्षय करनेवाली है । सुन्दरी ! उसीका व्रत करने पर तुम्हारी पिशाचता दूर होगी ।

ऐसा कहकर मेघावी अपने पिता मुनिवर च्यवन के आश्रम पर गये । उन्हें आया देख च्यवन ने पूछा : 'बेटा ! यह क्या किया ? तुमने तो अपने पुण्य का नाश कर डाला !'

मेघावी बोले : पिताजी ! मैंने अप्सरा के साथ रमण करने का पातक किया है । अब आप ही कोई ऐसा प्रायश्चित बताइये, जिससे पातक का नाश हो जाय ।

च्यवन ने कहा : बेटा ! चैत्र कृष्णपक्ष में जो 'पापमोचनी एकादशी' आती है, उसका व्रत करने पर पापराशि का विनाश हो जायेगा ।

पिता का यह कथन सुनकर मेघावी ने उस व्रत का अनुष्ठान किया । इससे उनका पाप नष्ट हो गया और वे पुन: तपस्या से परिपूर्ण हो गये । इसी प्रकार मंजुघोषा ने भी इस उत्तम व्रत का पालन किया । 'पापमोचनी' का व्रत करने के कारण वह पिशाचयोनि से मुक्त हुई और दिव्य रुपधारिणी श्रेष्ठ अप्सरा होकर स्वर्गलोक में चली गयी ।

भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं : राजन् ! जो श्रेष्ठ मनुष्य 'पापमोचनी एकादशी' का व्रत करते हैं उनके सारे पाप नष्ट हो जाते हैं । इसको पढ़ने और सुनने से सहस्र गौदान का फल मिलता है । ब्रह्महत्या, सुवर्ण की चोरी, सुरापान और गुरुपत्नीगमन करनेवाले महापातकी भी इस व्रत को करने से पापमुक्त हो जाते हैं । यह व्रत बहुत पुण्यमय है ।

कामदा एकादशी

युधिष्ठिर ने पूछा: वासुदेव ! आपको नमस्कार है ! कृपया आप यह बताइये कि चैत्र शुक्लपक्ष में किस नाम की एकादशी होती है?

भगवान श्रीकृष्ण बोले : राजन् ! एकाग्रचित्त होकर यह पुरातन कथा सुनो, जिसे वशिष्ठजी ने राजा दिलीप के पूछने पर कहा था ।

वशिष्ठजी बोले : राजन् ! चैत्र शुक्लपक्ष में 'कामदा' नाम की एकादशी होती है । वह परम पुण्यमयी है । पापरुपी ईँधन के लिए तो वह दावानल ही है ।

प्राचीन काल की बात है: नागपुर नाम का एक सुन्दर नगर था, जहाँ सोने के महल बने हुए थे । उस नगर में पुण्डरीक आदि महा भयंकर नाग निवास करते थे । पुण्डरीक नाम का नाग उन दिनों वहाँ राज्य करता था । गन्धर्व, किन्नर और अप्सराएँ भी उस नगरी का सेवन करती थीं । वहाँ एक श्रेष्ठ अप्सरा थी, जिसका नाम ललिता था । उसके साथ ललित नामवाला गन्धर्व भी था । वे दोनों पति पत्नी के रुप में रहते थे । दोनों ही परस्पर काम से पीड़ित रहा करते थे । ललिता के हृदय में सदा पति की ही मूर्ति बसी रहती थी और ललित के हृदय में सुन्दरी ललिता का नित्य निवास था ।

एक दिन की बात है । नागराज पुण्डरीक राजसभा में बैठकर मनोंरंजन कर रहा था । उस समय ललित का गान हो रहा था किन्तु उसके साथ उसकी प्यारी ललिता नहीं थी । गाते गाते उसे ललिता का स्मरण हो आया । अत: उसके पैरों की गति रुक गयी और जीभ लड़खड़ाने लगी ।

नागों में श्रेष्ठ कर्कोटक को ललित के मन का सन्ताप ज्ञात हो गया, अत: उसने राजा पुण्डरीक को उसके पैरों की गति रुकने और गान में त्रुटि होने की बात बता दी । कर्कोटक की बात सुनकर नागराज पुण्डरीक की आँखे क्रोध से लाल हो गयीं । उसने गाते हुए कामातुर ललित को शाप दिया : 'दुर्बुद्धे ! तू मेरे सामने गान करते समय भी पत्नी के वशीभूत हो गया, इसलिए राक्षस हो जा ।'

महाराज पुण्डरीक के इतना कहते ही वह गन्धर्व राक्षस हो गया । भयंकर मुख, विकराल आँखें और देखनेमात्र से भय उपजानेवाला रुप - ऐसा राक्षस होकर वह कर्म का फल भोगने लगा ।

ललिता अपने पति की विकराल आकृति देख मन ही मन बहुत चिन्तित हुई । भारी दु:ख से वह कष्ट पाने लगी । सोचने लगी: 'क्या करुँ? कहाँ जाऊँ? मेरे पति पाप से कष्ट पा रहे हैं...'

वह रोती हुई घने जंगलों में पति के पीछे पीछे घूमने लगी । वन में उसे एक सुन्दर आश्रम दिखायी दिया, जहाँ एक मुनि शान्त बैठे हुए थे । किसी भी प्राणी के साथ उनका वैर विरोध नहीं था । ललिता शीघ्रता के साथ वहाँ गयी और मुनि को प्रणाम करके उनके सामने खड़ी हुई । मुनि बड़े दयालु थे । उस दु:खिनी को देखकर वे इस प्रकार बोले : 'शुभे ! तुम कौन हो ? कहाँ से यहाँ आयी हो? मेरे सामने सच सच बताओ ।'

ललिता ने कहा : महामुने ! वीरधन्वा नामवाले एक गन्धर्व हैं । मैं उन्हीं महात्मा की पुत्री हूँ । मेरा नाम ललिता है । मेरे स्वामी अपने पाप दोष के कारण राक्षस हो गये हैं । उनकी यह अवस्था देखकर मुझे चैन नहीं है । ब्रह्मन् ! इस समय मेरा जो कर्त्तव्य हो, वह बताइये । विप्रवर! जिस पुण्य के द्वारा मेरे पति राक्षसभाव से छुटकारा पा जायें, उसका उपदेश कीजिये ।

ऋषि बोले : भद्रे ! इस समय चैत्र मास के शुक्लपक्ष की 'कामदा' नामक एकादशी तिथि है, जो सब पापों को हरनेवाली और उत्तम है । तुम उसीका विधिपूर्वक व्रत करो और इस व्रत का जो पुण्य हो, उसे अपने स्वामी को दे डालो । पुण्य देने पर क्षणभर में ही उसके शाप का दोष दूर हो जायेगा ।

राजन् ! मुनि का यह वचन सुनकर ललिता को बड़ा हर्ष हुआ । उसने एकादशी को उपवास करके द्वादशी के दिन उन ब्रह्मर्षि के समीप ही भगवान वासुदेव के (श्रीविग्रह के) समक्ष अपने पति के उद्धार के लिए यह वचन कहा: 'मैंने जो यह 'कामदा एकादशी' का उपवास व्रत किया है, उसके पुण्य के प्रभाव से मेरे पति का राक्षसभाव दूर हो जाय ।'

वशिष्ठजी कहते हैं : ललिता के इतना कहते ही उसी क्षण ललित का पाप दूर हो गया । उसने दिव्य देह धारण कर लिया । राक्षसभाव चला गया और पुन: गन्धर्वत्व की प्राप्ति हुई ।

नृपश्रेष्ठ ! वे दोनों पति पत्नी 'कामदा' के प्रभाव से पहले की अपेक्षा भी अधिक सुन्दर रुप धारण करके विमान पर आरुढ़ होकर अत्यन्त शोभा पाने लगे । यह जानकर इस एकादशी के व्रत का यत्नपूर्वक पालन करना चाहिए ।

मैंने लोगों के हित के लिए तुम्हारे सामने इस व्रत का वर्णन किया है । 'कामदा एकादशी' ब्रह्महत्या आदि पापों तथा पिशाचत्व आदि दोषों का नाश करनेवाली है । राजन् ! इसके पढ़ने और सुनने से वाजपेय यज्ञ का फल मिलता है ।

वरुथिनी एकादशी

युधिष्ठिर ने पूछा : हे वासुदेव ! वैशाख मास के कृष्णपक्ष में किस नाम की एकादशी होती है? कृपया उसकी महिमा बताइये।

भगवान श्रीकृष्ण बोले: राजन् ! वैशाख (गुजरात महाराष्ट्र के अनुसार चैत्र) कृष्णपक्ष की एकादशी 'वरुथिनी' के नाम से प्रसिद्ध है । यह इस लोक और परलोक में भी सौभाग्य प्रदान करनेवाली है । 'वरुथिनी' के व्रत से सदा सुख की प्राप्ति और पाप की हानि होती है । 'वरुथिनी' के व्रत से ही मान्धाता तथा धुन्धुमार आदि अन्य अनेक राजा स्वर्गलोक को प्राप्त हुए हैं । जो फल दस हजार वर्षों तक तपस्या करने के बाद मनुष्य को प्राप्त होता है, वही फल इस 'वरुथिनी एकादशी' का व्रत रखनेमात्र से प्राप्त हो जाता है ।

नृपश्रेष्ठ ! घोड़े के दान से हाथी का दान श्रेष्ठ है । भूमिदान उससे भी बड़ा है । भूमिदान से भी अधिक महत्त्व तिलदान का है । तिलदान से बढ़कर स्वर्णदान और स्वर्णदान से बढ़कर अन्नदान है, क्योंकि देवता, पितर तथा मनुष्यों को अन्न से ही तृप्ति होती है । विद्वान पुरुषों ने कन्यादान को भी इस दान के ही समान बताया है । कन्यादान के तुल्य ही गाय का दान है, यह साक्षात् भगवान का कथन है । इन सब दानों से भी बड़ा विद्यादान है । मनुष्य 'वरुथिनी एकादशी' का व्रत करके विद्यादान का भी फल प्राप्त कर लेता है । जो लोग पाप से मोहित होकर कन्या के धन से जीविका चलाते हैं, वे पुण्य का क्षय होने पर यातनामक नरक में जाते हैं । अत: सर्वथा प्रयत्न करके कन्या के धन से बचना चाहिए उसे अपने काम में नहीं लाना चाहिए । जो अपनी शक्ति के अनुसार अपनी कन्या को आभूषणों से विभूषित करके पवित्र भाव से कन्या का दान करता है, उसके पुण्य की संख्या बताने में चित्रगुप्त भी असमर्थ हैं । 'वरुथिनी एकादशी' करके भी मनुष्य उसीके समान फल प्राप्त करता है ।

राजन् ! रात को जागरण करके जो भगवान मधुसूदन का पूजन करते हैं, वे सब पापों से मुक्त हो परम गति को प्राप्त होते हैं । अत: पापभीरु मनुष्यों को पूर्ण प्रयत्न करके इस एकादशी का व्रत करना चाहिए । यमराज से डरनेवाला मनुष्य अवश्य 'वरुथिनी एकादशी' का व्रत करे । राजन् ! इसके पढ़ने और सुनने से सहस्र गौदान का फल मिलता है और मनुष्य सब पापों से मुक्त होकर विष्णुलोक में प्रतिष्ठित होता है ।

(सुयोग्य पाठक इसको पढ़ें, सुनें और गौदान का पुण्यलाभ प्राप्त करें ।)

मोहिनी एकादशी

युधिष्ठिर ने पूछा : जनार्दन ! वैशाख मास के शुक्लपक्ष में किस नाम की एकादशी होती है? उसका क्या फल होता है? उसके लिए कौन सी विधि है?

भगवान श्रीकृष्ण बोले : धर्मराज ! पूर्वकाल में परम बुद्धिमान श्रीरामचन्द्रजी ने महर्षि वशिष्ठजी से यही बात पूछी थी, जिसे आज तुम मुझसे पूछ रहे हो ।

श्रीराम ने कहा : भगवन् ! जो समस्त पापों का क्षय तथा सब प्रकार के दु:खों का निवारण करनेवाला, व्रतों में उत्तम व्रत हो, उसे मैं सुनना चाहता हूँ ।

वशिष्ठजी बोले : श्रीराम ! तुमने बहुत उत्तम बात पूछी है । मनुष्य तुम्हारा नाम लेने से ही सब पापों से शुद्ध हो जाता है । तथापि लोगों के हित की इच्छा से मैं पवित्रों में पवित्र उत्तम व्रत का वर्णन करुँगा । वैशाख मास के शुक्लपक्ष में जो एकादशी होती है, उसका नाम 'मोहिनी' है । वह सब पापों को हरनेवाली और उत्तम है । उसके व्रत के प्रभाव से मनुष्य मोहजाल तथा पातक समूह से छुटकारा पा जाते हैं ।

सरस्वती नदी के रमणीय तट पर भद्रावती नाम की सुन्दर नगरी है । वहाँ धृतिमान नामक राजा, जो चन्द्रवंश में उत्पन्न और सत्यप्रतिज्ञ थे, राज्य करते थे । उसी नगर में एक वैश्य रहता था, जो धन धान्य से परिपूर्ण और समृद्धशाली था । उसका नाम था धनपाल । वह सदा पुण्यकर्म में ही लगा रहता था । दूसरों के लिए पौसला (प्याऊ), कुआँ, मठ, बगीचा, पोखरा और घर बनवाया करता था । भगवान विष्णु की भक्ति में उसका हार्दिक अनुराग था । वह सदा शान्त रहता था । उसके पाँच पुत्र थे : सुमना, धुतिमान, मेघावी, सुकृत तथा धृष्टबुद्धि । धृष्टबुद्धि पाँचवाँ था । वह सदा बड़े बड़े पापों में ही संलग्न रहता था । जुए आदि दुर्व्यसनों में उसकी बड़ी आसक्ति थी । वह वेश्याओं से मिलने के लिए लालायित रहता था । उसकी बुद्धि न तो देवताओं के पूजन में लगती थी और न पितरों तथा ब्राह्मणों के सत्कार में । वह दुष्टात्मा अन्याय के मार्ग पर चलकर पिता का धन बरबाद किया करता था। एक दिन वह वेश्या के गले में बाँह डाले चौराहे पर घूमता देखा गया । तब पिता ने उसे घर से निकाल दिया तथा बन्धु बान्धवों ने भी उसका परित्याग कर दिया । अब वह दिन रात दु:ख और शोक में डूबा तथा कष्ट पर कष्ट उठाता हुआ इधर उधर भटकने लगा । एक दिन किसी पुण्य के उदय होने से वह महर्षि कौण्डिन्य के आश्रम पर जा पहुँचा । वैशाख का महीना था । तपोधन कौण्डिन्य गंगाजी में स्नान करके आये थे । धृष्टबुद्धि शोक के भार से पीड़ित हो मुनिवर कौण्डिन्य के पास गया और हाथ जोड़ सामने खड़ा होकर बोला : 'ब्रह्मन् ! द्विजश्रेष्ठ ! मुझ पर दया करके कोई ऐसा व्रत बताइये, जिसके पुण्य के प्रभाव से मेरी मुक्ति हो ।'

कौण्डिन्य बोले : वैशाख के शुक्लपक्ष में 'मोहिनी' नाम से प्रसिद्ध एकादशी का व्रत करो ।

'मोहिनी' को उपवास करने पर प्राणियों के अनेक जन्मों के किये हुए मेरु पर्वत जैसे महापाप भी नष्ट हो जाते हैं |'

वशिष्ठजी कहते है : श्रीरामचन्द्रजी ! मुनि का यह वचन सुनकर धृष्टबुद्धि का चित्त प्रसन्न हो गया । उसने कौण्डिन्य के उपदेश से विधिपूर्वक 'मोहिनी एकादशी' का व्रत किया । नृपश्रेष्ठ ! इस व्रत के करने से वह निष्पाप हो गया और दिव्य देह धारण कर गरुड़ पर आरुढ़ हो सब प्रकार के उपद्रवों से रहित श्रीविष्णुधाम को चला गया । इस प्रकार यह 'मोहिनी' का व्रत बहुत उत्तम है । इसके पढ़ने और सुनने से सहस्र गौदान का फल मिलता है ।'

अपरा एकादशी

युधिष्ठिर ने पूछा : जनार्दन ! ज्येष्ठ मास के कृष्णपक्ष में किस नाम की एकादशी होती है? मैं उसका माहात्म्य सुनना चाहता हूँ । उसे बताने की कृपा कीजिये ।

भगवान श्रीकृष्ण बोले : राजन् ! आपने सम्पूर्ण लोकों के हित के लिए बहुत उत्तम बात पूछी है । राजेन्द्र ! ज्येष्ठ (गुजरात महाराष्ट्र के अनुसार वैशाख) मास के कृष्णपक्ष की एकादशी का नाम 'अपरा' है । यह बहुत पुण्य प्रदान करनेवाली और बड़े बडे पातकों का नाश करनेवाली है । ब्रह्महत्या से दबा हुआ, गोत्र की हत्या करनेवाला, गर्भस्थ बालक को मारनेवाला, परनिन्दक तथा परस्त्रीलम्पट पुरुष भी 'अपरा एकादशी' के सेवन से निश्चय ही पापरहित हो जाता है । जो झूठी गवाही देता है, माप तौल में धोखा देता है, बिना जाने ही नक्षत्रों की गणना करता है और कूटनीति से आयुर्वेद का ज्ञाता बनकर वैध का काम करता है... ये सब नरक में निवास करनेवाले प्राणी हैं । परन्तु 'अपरा एकादशी' के सवेन से ये भी पापरहित हो जाते हैं । यदि कोई क्षत्रिय अपने क्षात्रधर्म का परित्याग करके युद्ध से भागता है तो वह क्षत्रियोचित धर्म से भ्रष्ट होने के कारण घोर नरक में पड़ता है । जो शिष्य विद्या प्राप्त करके स्वयं ही गुरुनिन्दा करता है, वह भी महापातकों से युक्त होकर भयंकर नरक में गिरता है । किन्तु 'अपरा एकादशी' के सेवन से ऐसे मनुष्य भी सदगति को प्राप्त होते हैं ।

माघ में जब सूर्य मकर राशि पर स्थित हो, उस समय प्रयाग में स्नान करनेवाले मनुष्यों को जो पुण्य होता है, काशी में शिवरात्रि का व्रत करने से जो पुण्य प्राप्त होता है, गया में पिण्डदान करके पितरों को तृप्ति प्रदान करनेवाला पुरुष जिस पुण्य का भागी होता है, बृहस्पति के सिंह राशि पर स्थित होने पर गोदावरी में स्नान करनेवाला मानव जिस फल को प्राप्त करता है, बदरिकाश्रम की यात्रा के समय भगवान केदार के दर्शन से तथा बदरीतीर्थ के सेवन से जो पुण्य फल उपलब्ध होता है तथा सूर्यग्रहण के समय कुरुक्षेत्र में दक्षिणासहित यज्ञ करके हाथी, घोड़ा और सुवर्ण दान करने से जिस फल की प्राप्ति होती है, 'अपरा एकादशी' के सेवन से भी मनुष्य वैसे ही फल प्राप्त करता है । 'अपरा' को उपवास करके भगवान वामन की पूजा करने से मनुष्य सब पापों से मुक्त

हो श्रीविष्णुलोक में प्रतिष्ठित होता है । इसको पढ़ने और सुनने से सहस्र गौदान का फल मिलता है ।

निर्जला एकादशी

युधिष्ठिर ने कहा : जनार्दन ! ज्येष्ठ मास के शुक्लपक्ष में जो एकादशी पड़ती हो, कृपया उसका वर्णन कीजिये ।

भगवान श्रीकृष्ण बोले : राजन् ! इसका वर्णन परम धर्मात्मा सत्यवतीनन्दन व्यासजी करेंगे, क्योंकि ये सम्पूर्ण शास्त्रों के तत्त्वज्ञ और वेद वेदांगों के पारंगत विद्वान हैं ।

तब वेदव्यासजी कहने लगे : दोनों ही पक्षों की एकादशियों के दिन भोजन न करे । द्वादशी के दिन स्नान आदि से पवित्र हो फूलों से भगवान केशव की पूजा करे । फिर नित्य कर्म समाप्त होने के पश्चात् पहले ब्राह्मणों को भोजन देकर अन्त में स्वयं भोजन करे । राजन् ! जननाशौच और मरणाशौच में भी एकादशी को भोजन नहीं करना चाहिए ।

यह सुनकर भीमसेन बोले : परम बुद्धिमान पितामह ! मेरी उत्तम बात सुनिये । राजा युधिष्ठिर, माता कुन्ती, द्रौपदी, अर्जुन, नकुल और सहदेव ये एकादशी को कभी भोजन नहीं करते तथा मुझसे भी हमेशा यही कहते हैं कि : 'भीमसेन ! तुम भी एकादशी को न खाया करो...' किन्तु मैं उन लोगों से यही कहता हूँ कि मुझसे भूख नहीं सही जायेगी ।

भीमसेन की बात सुनकर व्यासजी ने कहा : यदि तुम्हें स्वर्गलोक की प्राप्ति अभीष्ट है और नरक को दूषित समझते हो तो दोनों पक्षों की एकादशीयों के दिन भोजन न करना ।

भीमसेन बोले : महाबुद्धिमान पितामह ! मैं आपके सामने सच्ची बात कहता हूँ । एक बार भोजन करके भी मुझसे व्रत नहीं किया जा सकता, फिर उपवास करके तो मैं रह ही कैसे सकता हूँ? मेरे उदर में वृक नामक अग्नि सदा प्रज्वलित रहती है, अत: जब मैं बहुत अधिक खाता हूँ, तभी यह शांत होती है । इसलिए महामुने ! मैं वर्षभर में केवल एक ही उपवास कर सकता हूँ । जिससे स्वर्ग की प्राप्ति सुलभ हो तथा जिसके करने से मैं कल्याण का भागी हो सकूँ, ऐसा कोई एक व्रत निश्चय करके बताइये । मैं उसका यथोचित रुप से पालन करुँगा ।

व्यासजी ने कहा : भीम ! ज्येष्ठ मास में सूर्य वृष राशि पर हो या मिथुन राशि पर, शुक्लपक्ष में जो एकादशी हो, उसका यत्नपूर्वक निर्जल व्रत करो । केवल कुल्ला या आचमन करने के लिए मुख में जल डाल सकते हो, उसको छोड़कर किसी प्रकार का जल विद्वान पुरुष मुख में न डाले, अन्यथा व्रत भंग हो जाता है । एकादशी को सूर्योदय से लेकर दूसरे दिन के सूर्योदय तक मनुष्य

जल का त्याग करे तो यह व्रत पूर्ण होता है । तदनन्तर द्वादशी को प्रभातकाल में स्नान करके ब्राह्मणों को विधिपूर्वक जल और सुवर्ण का दान करे । इस प्रकार सब कार्य पूरा करके जितेन्द्रिय पुरुष ब्राह्मणों के साथ भोजन करे । वर्षभर में जितनी एकादशीयाँ होती हैं, उन सबका फल निर्जला एकादशी के सेवन से मनुष्य प्राप्त कर लेता है, इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है । शंख, चक्र और गदा धारण करनेवाले भगवान केशव ने मुझसे कहा था कि: 'यदि मानव सबको छोड़कर एकमात्र मेरी शरण में आ जाय और एकादशी को निराहार रहे तो वह सब पापों से छूट जाता है ।'

एकादशी व्रत करनेवाले पुरुष के पास विशालकाय, विकराल आकृति और काले रंगवाले दण्ड पाशधारी भयंकर यमदूत नहीं जाते । अंतकाल में पीताम्बरधारी, सौम्य स्वभाववाले, हाथ में सुदर्शन धारण करनेवाले और मन के समान वेगशाली विष्णुदूत आखिर इस वैष्णव पुरुष को भगवान विष्णु के धाम में ले जाते हैं । अतः निर्जला एकादशी को पूर्ण यत्न करके उपवास और श्रीहरि का पूजन करो । स्त्री हो या पुरुष, यदि उसने मेरु पर्वत के बराबर भी महान पाप किया हो तो वह सब इस एकादशी व्रत के प्रभाव से भस्म हो जाता है । जो मनुष्य उस दिन जल के नियम का पालन करता है, वह पुण्य का भागी होता है । उसे एक एक प्रहर में कोटि कोटि स्वर्णमुद्रा दान करने का फल प्राप्त होता सुना गया है । मनुष्य निर्जला एकादशी के दिन स्नान, दान, जप, होम आदि जो कुछ भी करता है, वह सब अक्षय होता है, यह भगवान श्रीकृष्ण का कथन है । निर्जला एकादशी को विधिपूर्वक उत्तम रीति से उपवास करके मानव वैष्णवपद को प्राप्त कर लेता है । जो मनुष्य एकादशी के दिन अन्न खाता है, वह पाप का भोजन करता है । इस लोक में वह चाण्डाल के समान है और मरने पर दुर्गति को प्राप्त होता है ।

जो ज्येष्ठ के शुक्लपक्ष में एकादशी को उपवास करके दान करेंगे, वे परम पद को प्राप्त होंगे । जिन्होंने एकादशी को उपवास किया है, वे ब्रह्महत्यारे, शराबी, चोर तथा गुरुद्रोही होने पर भी सब पातकों से मुक्त हो जाते हैं ।

कुन्तीनन्दन ! 'निर्जला एकादशी' के दिन श्रद्धालु स्त्री पुरुषों के लिए जो विशेष दान और कर्त्तव्य विहित हैं, उन्हें सुनो: उस दिन जल में शयन करनेवाले भगवान विष्णु का पूजन और जलमयी धेनु का दान करना चाहिए अथवा प्रत्यक्ष धेनु या घृतमयी धेनु का दान उचित है । पर्याप्त दक्षिणा और भाँति भाँति के मिष्ठान्नों द्वारा यत्नपूर्वक ब्राह्मणों को सन्तुष्ट करना चाहिए । ऐसा करने से ब्राह्मण अवश्य संतुष्ट होते हैं और उनके संतुष्ट होने पर श्रीहरि मोक्ष प्रदान करते हैं । जिन्होंने शम, दम, और दान में प्रवृत हो श्रीहरि की पूजा और रात्रि में जागरण करते हुए इस 'निर्जला एकादशी' का व्रत किया है, उन्होंने अपने साथ ही बीती हुई सौ पीढ़ियों को और आनेवाली सौ पीढ़ियों को भगवान वासुदेव के परम धाम में पहुँचा दिया है । निर्जला एकादशी के दिन अन्न, वस्त्र, गौ, जल, शैय्या, सुन्दर आसन, कमण्डलु तथा छाता दान करने चाहिए । जो श्रेष्ठ तथा सुपात्र ब्राह्मण को जूता दान करता है, वह सोने के विमान पर बैठकर स्वर्गलोक में प्रतिष्ठित

होता है । जो इस एकादशी की महिमा को भक्तिपूर्वक सुनता अथवा उसका वर्णन करता है, वह स्वर्गलोक में जाता है । चतुर्दशीयुक्त अमावस्या को सूर्यग्रहण के समय श्राद्ध करके मनुष्य जिस फल को प्राप्त करता है, वही फल इसके श्रवण से भी प्राप्त होता है । पहले दन्तधावन करके यह नियम लेना चाहिए कि : 'मैं भगवान केशव की प्रसन्न्ता के लिए एकादशी को निराहार रहकर आचमन के सिवा दूसरे जल का भी त्याग करुँगा ।' द्वादशी को देवेश्वर भगवान विष्णु का पूजन करना चाहिए । गन्ध, धूप, पुष्प और सुन्दर वस्त्र से विधिपूर्वक पूजन करके जल के घड़े के दान का संकल्प करते हुए निम्नांकित मंत्र का उच्चारण करे :

देवदेव हृषीकेश संसारार्णवतारक ।
उदकुम्भप्रदानेन नय मां परमां गतिम्॥

'संसारसागर से तारनेवाले हे देवदेव हृषीकेश ! इस जल के घड़े का दान करने से आप मुझे परम गति की प्राप्ति कराइये ।'

भीमसेन ! ज्येष्ठ मास में शुक्लपक्ष की जो शुभ एकादशी होती है, उसका निर्जल व्रत करना चाहिए । उस दिन श्रेष्ठ ब्राह्मणों को शक्कर के साथ जल के घड़े दान करने चाहिए । ऐसा करने से मनुष्य भगवान विष्णु के समीप पहुँचकर आनन्द का अनुभव करता है । तत्पश्चात् द्वादशी को ब्राह्मण भोजन कराने के बाद स्वयं भोजन करे । जो इस प्रकार पूर्ण रुप से पापनाशिनी एकादशी का व्रत करता है, वह सब पापों से मुक्त हो आनंदमय पद को प्राप्त होता है ।

यह सुनकर भीमसेन ने भी इस शुभ एकादशी का व्रत आरम्भ कर दिया । तबसे यह लोक मे 'पाण्डव द्वादशी' के नाम से विख्यात हुई ।

योगिनी एकादशी

युधिष्ठिर ने पूछा : वासुदेव ! आषाढ़ के कृष्णपक्ष में जो एकादशी होती है, उसका क्या नाम है? कृपया उसका वर्णन कीजिये ।

भगवान श्रीकृष्ण बोले : नृपश्रेष्ठ ! आषाढ़ (गुजरात महाराष्ट्र के अनुसार ज्येष्ठ) के कृष्णपक्ष की एकादशी का नाम 'योगिनी' है। यह बड़े बडे पातकों का नाश करनेवाली है। संसारसागर में डूबे हुए प्राणियों के लिए यह सनातन नौका के समान है ।

अलकापुरी के राजाधिराज कुबेर सदा भगवान शिव की भक्ति में तत्पर रहनेवाले हैं । उनका 'हेममाली' नामक एक यक्ष सेवक था, जो पूजा के लिए फूल लाया करता था । हेममाली की पत्नी का नाम 'विशालाक्षी' था । वह यक्ष कामपाश में आबद्ध होकर सदा अपनी पत्नी में आसक्त रहता था । एक दिन हेममाली मानसरोवर से फूल लाकर अपने घर में ही ठहर गया और पत्नी के

प्रेमपाश में खोया रह गया, अतः कुबेर के भवन में न जा सका । इधर कुबेर मन्दिर में बैठकर शिव का पूजन कर रहे थे । उन्होंने दोपहर तक फूल आने की प्रतीक्षा की । जब पूजा का समय व्यतीत हो गया तो यक्षराज ने कुपित होकर सेवकों से कहा : 'यक्षों ! दुरात्मा हेममाली क्यों नहीं आ रहा है ?'

यक्षों ने कहा: राजन् ! वह तो पत्नी की कामना में आसक्त हो घर में ही रमण कर रहा है । यह सुनकर कुबेर क्रोध से भर गये और तुरन्त ही हेममाली को बुलवाया । वह आकर कुबेर के सामने खड़ा हो गया । उसे देखकर कुबेर बोले : 'ओ पापी ! अरे दुष्ट ! ओ दुराचारी ! तूने भगवान की अवहेलना की है, अतः कोढ़ से युक्त और अपनी उस प्रियतमा से वियुक्त होकर इस स्थान से भ्रष्ट होकर अन्यत्र चला जा ।'

कुबेर के ऐसा कहने पर वह उस स्थान से नीचे गिर गया । कोढ़ से सारा शरीर पीड़ित था परन्तु शिव पूजा के प्रभाव से उसकी स्मरणशक्ति लुप्त नहीं हुई । तदनन्तर वह पर्वतों में श्रेष्ठ मेरुगिरि के शिखर पर गया । वहाँ पर मुनिवर मार्कण्डेयजी का उसे दर्शन हुआ । पापकर्मा यक्ष ने मुनि के चरणों में प्रणाम किया । मुनिवर मार्कण्डेय ने उसे भय से काँपते देख कहा : 'तुझे कोढ़ के रोग ने कैसे दबा लिया ?'

यक्ष बोला : मुने ! मैं कुबेर का अनुचर हेममाली हूँ । मैं प्रतिदिन मानसरोवर से फूल लाकर शिव पूजा के समय कुबेर को दिया करता था । एक दिन पत्नी सहवास के सुख में फँस जाने के कारण मुझे समय का ज्ञान ही नहीं रहा, अतः राजाधिराज कुबेर ने कुपित होकर मुझे शाप दे दिया, जिससे मैं कोढ़ से आक्रान्त होकर अपनी प्रियतमा से बिछुड़ गया । मुनिश्रेष्ठ ! संतों का चित्त स्वभावतः परोपकार में लगा रहता है, यह जानकर मुझ अपराधी को कर्तव्य का उपदेश दीजिये ।

मार्कण्डेयजी ने कहा: तुमने यहाँ सच्ची बात कही है, इसलिए मैं तुम्हें कल्याणप्रद व्रत का उपदेश करता हूँ । तुम आषाढ़ मास के कृष्णपक्ष की 'योगिनी एकादशी' का व्रत करो । इस व्रत के पुण्य से तुम्हारा कोढ़ निश्चय ही दूर हो जायेगा ।

भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं: राजन् ! मार्कण्डेयजी के उपदेश से उसने 'योगिनी एकादशी' का व्रत किया, जिससे उसके शरीर को कोढ़ दूर हो गया । उस उत्तम व्रत का अनुष्ठान करने पर वह पूर्ण सुखी हो गया ।

नृपश्रेष्ठ ! यह 'योगिनी' का व्रत ऐसा पुण्यशाली है कि अठ्ठासी हजार ब्राह्मणों को भोजन कराने से जो फल मिलता है, वही फल 'योगिनी एकादशी' का व्रत करनेवाले मनुष्य को मिलता है । 'योगिनी' महान पापों को शान्त करनेवाली और महान पुण्य फल देनेवाली है । इस माहात्म्य को पढ़ने और सुनने से मनुष्य सब पापों से मुक्त हो जाता है ।

शयनी एकादशी

युधिष्ठिर ने पूछा : भगवन् ! आषाढ़ के शुक्लपक्ष में कौन सी एकादशी होती है ? उसका नाम और विधि क्या है? यह बतलाने की कृपा करें ।

भगवान श्रीकृष्ण बोले : राजन् ! आषाढ़ शुक्लपक्ष की एकादशी का नाम 'शयनी' है। मैं उसका वर्णन करता हूँ । वह महान पुण्यमयी, स्वर्ग और मोक्ष प्रदान करनेवाली, सब पापों को हरनेवाली तथा उत्तम व्रत है । आषाढ़ शुक्लपक्ष में 'शयनी एकादशी' के दिन जिन्होंने कमल पुष्प से कमललोचन भगवान विष्णु का पूजन तथा एकादशी का उत्तम व्रत किया है, उन्होंने तीनों लोकों और तीनों सनातन देवताओं का पूजन कर लिया । 'हरिशयनी एकादशी' के दिन मेरा एक स्वरुप राजा बलि के यहाँ रहता है और दूसरा क्षीरसागर में शेषनाग की शैय्या पर तब तक शयन करता है, जब तक आगामी कार्तिक की एकादशी नहीं आ जाती, अतः आषाढ़ शुक्ल पक्ष की एकादशी से लेकर कार्तिक शुक्ल एकादशी तक मनुष्य को भलीभाँति धर्म का आचरण करना चाहिए । जो मनुष्य इस व्रत का अनुष्ठान करता है, वह परम गति को प्राप्त होता है, इस कारण यत्नपूर्वक इस एकादशी का व्रत करना चाहिए । एकादशी की रात में जागरण करके शंख, चक्र और गदा धारण करनेवाले भगवान विष्णु की भक्तिपूर्वक पूजा करनी चाहिए । ऐसा करनेवाले पुरुष के पुण्य की गणना करने में चतुर्मुख ब्रह्माजी भी असमर्थ हैं ।

राजन् ! जो इस प्रकार भोग और मोक्ष प्रदान करनेवाले सर्वपापहारी एकादशी के उत्तम व्रत का पालन करता है, वह जाति का चाण्डाल होने पर भी संसार में सदा मेरा प्रिय रहनेवाला है । जो मनुष्य दीपदान, पलाश के पत्ते पर भोजन और व्रत करते हुए चौमासा व्यतीत करते हैं, वे मेरे प्रिय हैं । चौमासे में भगवान विष्णु सोये रहते हैं, इसलिए मनुष्य को भूमि पर शयन करना चाहिए । सावन में साग, भादों में दही, क्वार में दूध और कार्तिक में दाल का त्याग कर देना चाहिए । जो चौमसे में ब्रह्मचर्य का पालन करता है, वह परम गति को प्राप्त होता है । राजन् ! एकादशी के व्रत से ही मनुष्य सब पापों से मुक्त हो जाता है, अतः सदा इसका व्रत करना चाहिए । कभी भूलना नहीं चाहिए । 'शयनी' और 'बोधिनी' के बीच में जो कृष्णपक्ष की एकादशीयाँ होती हैं, गृहस्थ के लिए वे ही व्रत रखने योग्य हैं - अन्य मासों की कृष्णपक्षीय एकादशी गृहस्थ के रखने योग्य नहीं होती । शुक्लपक्ष की सभी एकादशी करनी चाहिए ।

कामिका एकादशी

युधिष्ठिर ने पूछा : गोविन्द ! वासुदेव ! आपको मेरा नमस्कार है ! श्रावण (गुजरात महाराष्ट्र के अनुसार आषाढ़) के कृष्णपक्ष में कौन सी एकादशी होती है ? कृपया उसका वर्णन कीजिये ।

भगवान श्रीकृष्ण बोले : राजन् ! सुनो । मैं तुम्हें एक पापनाशक उपाख्यान सुनाता हूँ, जिसे पूर्वकाल में ब्रह्माजी ने नारदजी के पूछने पर कहा था ।

नारदजी ने प्रशन किया : हे भगवन् ! हे कमलासन ! मैं आपसे यह सुनना चाहता हूँ कि श्रवण के कृष्णपक्ष में जो एकादशी होती है, उसका क्या नाम है? उसके देवता कौन हैं तथा उससे कौन सा पुण्य होता है? प्रभो ! यह सब बताइये ।

ब्रह्माजी ने कहा : नारद ! सुनो । मैं सम्पूर्ण लोकों के हित की इच्छा से तुम्हारे प्रश्न का उत्तर दे रहा हूँ । श्रावण मास में जो कृष्णपक्ष की एकादशी होती है, उसका नाम 'कामिका' है । उसके स्मरणमात्र से वाजपेय यज्ञ का फल मिलता है । उस दिन श्रीधर, हरि, विष्णु, माधव और मधुसूदन आदि नामों से भगवान का पूजन करना चाहिए ।

भगवान श्रीकृष्ण के पूजन से जो फल मिलता है, वह गंगा, काशी, नैमिषारण्य तथा पुष्कर क्षेत्र में भी सुलभ नहीं है । सिंह राशि के बृहस्पति होने पर तथा व्यतीपात और दण्डयोग में गोदावरी स्नान से जिस फल की प्राप्ति होती है, वही फल भगवान श्रीकृष्ण के पूजन से भी मिलता है ।

जो समुद्र और वनसहित समूची पृथ्वी का दान करता है तथा जो 'कामिका एकादशी' का व्रत करता है, वे दोनों समान फल के भागी माने गये हैं ।

जो ब्यायी हुई गाय को अन्यान्य सामग्रियोंसहित दान करता है, उस मनुष्य को जिस फल की प्राप्ति होती है, वही 'कामिका एकादशी' का व्रत करनेवाले को मिलता है । जो नरश्रेष्ठ श्रावण मास में भगवान श्रीधर का पूजन करता है, उसके द्वारा गन्धर्वों और नागोंसहित सम्पूर्ण देवताओं की पूजा हो जाती है ।

अत: पापभीरु मनुष्यों को यथाशक्ति पूरा प्रयत्न करके 'कामिका एकादशी' के दिन श्रीहरि का पूजन करना चाहिए । जो पापरुपी पंक से भरे हुए संसारसमुद्र में डूब रहे हैं, उनका उद्धार करने के लिए 'कामिका एकादशी' का व्रत सबसे उत्तम है । अध्यात्म विधापरायण पुरुषों को जिस फल की प्राप्ति होती है, उससे बहुत अधिक फल 'कामिका एकादशी' व्रत का सेवन करनेवालों को मिलता है । 'कामिका एकादशी' का व्रत करनेवाला मनुष्य रात्रि में जागरण करके न तो कभी भयंकर यमदूत का दर्शन करता है और न कभी दुर्गति में ही पड़ता है ।

लालमणि, मोती, वैदूर्य और मूँगे आदि से पूजित होकर भी भगवान विष्णु वैसे संतुष्ट नहीं होते, जैसे तुलसीदल से पूजित होने पर होते हैं । जिसने तुलसी की मंजरियों से श्रीकेशव का पूजन कर लिया है, उसके जन्मभर का पाप निश्चय ही नष्ट हो जाता है ।

या दृष्टा निखिलाघसंघशमनी स्पृष्टा वपुष्पावनी

रोगाणामभिवन्दिता निरसनी सिक्तान्तकत्रासिनी ।
प्रत्यासत्तिविधायिनी भगवतः कृष्णस्य संरोपिता
न्यस्ता तच्चरणे विमुक्तिफलदा तस्यै तुलस्यै नमः ॥

'जो दर्शन करने पर सारे पापसमुदाय का नाश कर देती है, स्पर्श करने पर शरीर को पवित्र बनाती है, प्रणाम करने पर रोगों का निवारण करती है, जल से सींचने पर यमराज को भी भय पहुँचाती है, आरोपित करने पर भगवान श्रीकृष्ण के समीप ले जाती है और भगवान के चरणों मे चढ़ाने पर मोक्षरुपी फल प्रदान करती है, उस तुलसी देवी को नमस्कार है ।'

जो मनुष्य एकादशी को दिन रात दीपदान करता है, उसके पुण्य की संख्या चित्रगुप्त भी नहीं जानते । एकादशी के दिन भगवान श्रीकृष्ण के सम्मुख जिसका दीपक जलता है, उसके पितर स्वर्गलोक में स्थित होकर अमृतपान से तृप्त होते हैं । घी या तिल के तेल से भगवान के सामने दीपक जलाकर मनुष्य देह त्याग के पश्चात् करोड़ो दीपकों से पूजित हो स्वर्गलोक में जाता है ।'

भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं : युधिष्ठिर ! यह तुम्हारे सामने मैंने 'कामिका एकादशी' की महिमा का वर्णन किया है । 'कामिका' सब पातकों को हरनेवाली है, अतः मानवों को इसका व्रत अवश्य करना चाहिए । यह स्वर्गलोक तथा महान पुण्यफल प्रदान करनेवाली है । जो मनुष्य श्रद्धा के साथ इसका माहात्म्य श्रवण करता है, वह सब पापों से मुक्त हो श्रीविष्णुलोक में जाता है ।

पुत्रदा एकादशी

युधिष्ठिर ने पूछा : मधुसूदन ! श्रावण के शुक्लपक्ष में किस नाम की एकादशी होती है ? कृपया मेरे सामने उसका वर्णन कीजिये ।

भगवान श्रीकृष्ण बोले : राजन् ! प्राचीन काल की बात है । द्वापर युग के प्रारम्भ का समय था । माहिष्मतीपुर में राजा महीजित अपने राज्य का पालन करते थे किन्तु उन्हें कोई पुत्र नहीं था, इसलिए वह राज्य उन्हें सुखदायक नहीं प्रतीत होता था । अपनी अवस्था अधिक देख राजा को बड़ी चिन्ता हुई । उन्होंने प्रजावर्ग में बैठकर इस प्रकार कहा: 'प्रजाजनो ! इस जन्म में मुझसे कोई पातक नहीं हुआ है । मैंने अपने खजाने में अन्याय से कमाया हुआ धन नहीं जमा किया है । ब्राह्मणों और देवताओं का धन भी मैंने कभी नहीं लिया है । पुत्रवत् प्रजा का पालन किया है । धर्म से पृथ्वी पर अधिकार जमाया है । दुष्टों को, चाहे वे बन्धु और पुत्रों के समान ही क्यों न रहे हों, दण्ड दिया है । शिष्ट पुरुषों का सदा सम्मान किया है और किसीको द्वेष का पात्र नहीं समझा है । फिर क्या कारण है, जो मेरे घर में आज तक पुत्र उत्पन्न नहीं हुआ? आप लोग इसका विचार करें ।'

राजा के ये वचन सुनकर प्रजा और पुरोहितों के साथ ब्राह्मणों ने उनके हित का विचार करके गहन वन में प्रवेश किया । राजा का कल्याण चाहनेवाले वे सभी लोग इधर उधर घूमकर ऋषिसेवित आश्रमों की तलाश करने लगे । इतने में उन्हें मुनिश्रेष्ठ लोमशजी के दर्शन हुए ।

लोमशजी धर्म के तत्त्वज्ञ, सम्पूर्ण शास्त्रों के विशिष्ट विद्वान, दीर्घायु और महात्मा हैं । उनका शरीर लोम से भरा हुआ है । वे ब्रह्माजी के समान तेजस्वी हैं । एक एक कल्प बीतने पर उनके शरीर का एक एक लोम विशीर्ण होता है, टूटकर गिरता है, इसीलिए उनका नाम लोमश हुआ है । वे महामुनि तीनों कालों की बातें जानते हैं ।

उन्हें देखकर सब लोगों को बड़ा हर्ष हुआ । लोगों को अपने निकट आया देख लोमशजी ने पूछा : 'तुम सब लोग किसलिए यहाँ आये हो? अपने आगमन का कारण बताओ । तुम लोगों के लिए जो हितकर कार्य होगा, उसे मैं अवश्य करुँगा ।'

प्रजाजनों ने कहा : ब्रह्मन् ! इस समय महीजित नामवाले जो राजा हैं, उन्हें कोई पुत्र नहीं है । हम लोग उन्हींकी प्रजा हैं, जिनका उन्होंने पुत्र की भाँति पालन किया है । उन्हें पुत्रहीन देख, उनके दु:ख से दु:खित हो हम तपस्या करने का दृढ़ निश्चय करके यहाँ आये है । द्विजोत्तम ! राजा के भाग्य से इस समय हमें आपका दर्शन मिल गया है । महापुरुषों के दर्शन से ही मनुष्यों के सब कार्य सिद्ध हो जाते हैं । मुने ! अब हमें उस उपाय का उपदेश कीजिये, जिससे राजा को पुत्र की प्राप्ति हो ।

उनकी बात सुनकर महर्षि लोमश दो घड़ी के लिए ध्यानमग्न हो गये । तत्पश्चात् राजा के प्राचीन जन्म का वृत्तान्त जानकर उन्होंने कहा : 'प्रजावृन्द ! सुनो । राजा महीजित पूर्वजन्म में मनुष्यों को चूसनेवाला धनहीन वैश्य था । वह वैश्य गाँव-गाँव घूमकर व्यापार किया करता था । एक दिन ज्येष्ठ के शुक्लपक्ष में दशमी तिथि को, जब दोपहर का सूर्य तप रहा था, वह किसी गाँव की सीमा में एक जलाशय पर पहुँचा । पानी से भरी हुई बावली देखकर वैश्य ने वहाँ जल पीने का विचार किया । इतने में वहाँ अपने बछड़े के साथ एक गौ भी आ पहुँची । वह प्यास से व्याकुल और ताप से पीड़ित थी, अत: बावली में जाकर जल पीने लगी । वैश्य ने पानी पीती हुई गाय को हाँककर दूर हटा दिया और स्वयं पानी पीने लगा । उसी पापकर्म के कारण राजा इस समय पुत्रहीन हुए हैं । किसी जन्म के पुण्य से इन्हें निष्कण्टक राज्य की प्राप्ति हुई है ।'

प्रजाजनों ने कहा : मुने ! पुराणों में उल्लेख है कि प्रायश्चितरुप पुण्य से पाप नष्ट होते हैं, अत: ऐसे पुण्यकर्म का उपदेश कीजिये, जिससे उस पाप का नाश हो जाय ।

लोमशजी बोले : प्रजाजनो ! श्रावण मास के शुक्लपक्ष में जो एकादशी होती है, वह 'पुत्रदा' के नाम से विख्यात है । वह मनोवांछित फल प्रदान करनेवाली है । तुम लोग उसीका व्रत करो ।

यह सुनकर प्रजाजनों ने मुनि को नमस्कार किया और नगर में आकर विधिपूर्वक 'पुत्रदा एकादशी' के व्रत का अनुष्ठान किया । उन्होंने विधिपूर्वक जागरण भी किया और उसका निर्मल पुण्य राजा को अर्पण कर दिया । तत्पश्चात् रानी ने गर्भधारण किया और प्रसव का समय आने पर बलवान पुत्र को जन्म दिया ।

इसका माहात्म्य सुनकर मनुष्य पापों से मुक्त हो जाता है तथा इहलोक में सुख पाकर परलोक में स्वर्गीय गति को प्राप्त होता है ।

अजा एकादशी

युधिष्ठिर ने पूछा : जनार्दन ! अब मैं यह सुनना चाहता हूँ कि भाद्रपद (गुजरात महाराष्ट्र के अनुसार श्रावण) मास के कृष्णपक्ष में कौन सी एकादशी होती है ? कृपया बताइये ।

भगवान श्रीकृष्ण बोले : राजन् ! एकचित्त होकर सुनो । भाद्रपद मास के कृष्णपक्ष की एकादशी का नाम 'अजा' है । वह सब पापों का नाश करनेवाली बतायी गयी है । भगवान हृषीकेश का पूजन करके जो इसका व्रत करता है उसके सारे पाप नष्ट हो जाते हैं ।

पूर्वकाल में हरिश्चन्द्र नामक एक विख्यात चक्रवर्ती राजा हो गये हैं, जो समस्त भूमण्डल के स्वामी और सत्यप्रतिज्ञ थे । एक समय किसी कर्म का फलभोग प्राप्त होने पर उन्हें राज्य से भ्रष्ट होना पड़ा । राजा ने अपनी पत्नी और पुत्र को बेच दिया । फिर अपने को भी बेच दिया । पुण्यात्मा होते हुए भी उन्हें चाण्डाल की दासता करनी पड़ी । वे मुर्दों का कफन लिया करते थे । इतने पर भी नृपश्रेष्ठ हरिश्चन्द्र सत्य से विचलित नहीं हुए ।

इस प्रकार चाण्डाल की दासता करते हुए उनके अनेक वर्ष व्यतीत हो गये । इससे राजा को बड़ी चिन्ता हुई । वे अत्यन्त दुःखी होकर सोचने लगे: 'क्या करुँ ? कहाँ जाऊँ? कैसे मेरा उद्धार होगा?' इस प्रकार चिन्ता करते करते वे शोक के समुद्र में डूब गये ।

राजा को शोकातुर जानकर महर्षि गौतम उनके पास आये । श्रेष्ठ ब्राह्मण को अपने पास आया हुआ देखकर नृपश्रेष्ठ ने उनके चरणों में प्रणाम किया और दोनों हाथ जोड़ गौतम के सामने खड़े होकर अपना सारा दुःखमय समाचार कह सुनाया ।

राजा की बात सुनकर महर्षि गौतम ने कहा :'राजन् ! भादों के कृष्णपक्ष में अत्यन्त कल्याणमयी 'अजा' नाम की एकादशी आ रही है, जो पुण्य प्रदान करनेवाली है । इसका व्रत करो । इससे पाप का अन्त होगा । तुम्हारे भाग्य से आज के सातवें दिन एकादशी है । उस दिन उपवास करके रात

में जागरण करना ।' ऐसा कहकर महर्षि गौतम अन्तर्धान हो गये ।

मुनि की बात सुनकर राजा हरिश्चन्द्र ने उस उत्तम व्रत का अनुष्ठान किया । उस व्रत के प्रभाव से राजा सारे दु:खों से पार हो गये । उन्हें पत्नी पुन: प्राप्त हुई और पुत्र का जीवन मिल गया । आकाश में दुन्दुभियाँ बज उठीं । देवलोक से फूलों की वर्षा होने लगी ।

एकादशी के प्रभाव से राजा ने निष्कण्टक राज्य प्राप्त किया और अन्त में वे पुरजन तथा परिजनों के साथ स्वर्गलोक को प्राप्त हो गये ।

राजा युधिष्ठिर ! जो मनुष्य ऐसा व्रत करते हैं, वे सब पापों से मुक्त हो स्वर्गलोक में जाते हैं । इसके पढ़ने और सुनने से अश्वमेघ यज्ञ का फल मिलता है ।

पधा एकादशी

युधिष्ठिर ने पूछा : केशव ! कृपया यह बताइये कि भाद्रपद मास के शुक्लपक्ष में जो एकादशी होती है, उसका क्या नाम है, उसके देवता कौन हैं और कैसी विधि है?

भगवान श्रीकृष्ण बोले : राजन् ! इस विषय में मैं तुम्हें आश्चर्यजनक कथा सुनाता हूँ, जिसे ब्रह्माजी ने महात्मा नारद से कहा था ।

नारदजी ने पूछा : चतुर्मुख ! आपको नमस्कार है ! मैं भगवान विष्णु की आराधना के लिए आपके मुख से यह सुनना चाहता हूँ कि भाद्रपद मास के शुक्लपक्ष में कौन सी एकादशी होती है?

ब्रह्माजी ने कहा : मुनिश्रेष्ठ ! तुमने बहुत उत्तम बात पूछी है । क्यों न हो, वैष्णव जो ठहरे ! भादों के शुक्लपक्ष की एकादशी 'पधा' के नाम से विख्यात है । उस दिन भगवान हृषीकेश की पूजा होती है । यह उत्तम व्रत अवश्य करने योग्य है । सूर्यवंश में मान्धाता नामक एक चक्रवर्ती, सत्यप्रतिज्ञ और प्रतापी राजर्षि हो गये हैं । वे अपने औरस पुत्रों की भाँति धर्मपूर्वक प्रजा का पालन किया करते थे । उनके राज्य में अकाल नहीं पड़ता था, मानसिक चिन्ताएँ नहीं सताती थीं और व्याधियों का प्रकोप भी नहीं होता था । उनकी प्रजा निर्भय तथा धन धान्य से समृद्ध थी । महाराज के कोष में केवल न्यायोपार्जित धन का ही संग्रह था । उनके राज्य में समस्त वर्णों और आश्रमों के लोग अपने अपने धर्म में लगे रहते थे । मान्धाता के राज्य की भूमि कामधेनु के समान फल देनेवाली थी । उनके राज्यकाल में प्रजा को बहुत सुख प्राप्त होता था ।

एक समय किसी कर्म का फलभोग प्राप्त होने पर राजा के राज्य में तीन वर्षों तक वर्षा नहीं हुई । इससे उनकी प्रजा भूख से पीड़ित हो नष्ट होने लगी । तब सम्पूर्ण प्रजा ने महाराज के पास

आकर इस प्रकार कहा :

प्रजा बोली: नृपश्रेष्ठ ! आपको प्रजा की बात सुननी चाहिए । पुराणों में मनीषी पुरुषों ने जल को 'नार' कहा है । वह 'नार' ही भगवान का 'अयन' (निवास स्थान) है, इसलिए वे 'नारायण' कहलाते हैं । नारायणस्वरुप भगवान विष्णु सर्वत्र व्यापकरुप में विराजमान हैं । वे ही मेघस्वरुप होकर वर्षा करते हैं, वर्षा से अन्न पैदा होता है और अन्न से प्रजा जीवन धारण करती है । नृपश्रेष्ठ ! इस समय अन्न के बिना प्रजा का नाश हो रहा है, अतः ऐसा कोई उपाय कीजिये, जिससे हमारे योगक्षेम का निर्वाह हो ।

राजा ने कहा : आप लोगों का कथन सत्य है, क्योंकि अन्न को ब्रह्म कहा गया है । अन्न से प्राणी उत्पन्न होते हैं और अन्न से ही जगत जीवन धारण करता है । लोक में बहुधा ऐसा सुना जाता है तथा पुराण में भी बहुत विस्तार के साथ ऐसा वर्णन है कि राजाओं के अत्याचार से प्रजा को पीड़ा होती है, किन्तु जब मैं बुद्धि से विचार करता हूँ तो मुझे अपना किया हुआ कोई अपराध नहीं दिखायी देता । फिर भी मैं प्रजा का हित करने के लिए पूर्ण प्रयत्न करुँगा ।

ऐसा निश्चय करके राजा मान्धाता इने गिने व्यक्तियों को साथ ले, विधाता को प्रणाम करके सघन वन की ओर चल दिये । वहाँ जाकर मुख्य मुख्य मुनियों और तपस्वियों के आश्रमों पर घूमते फिरे । एक दिन उन्हें ब्रह्मपुत्र अंगिरा ऋषि के दर्शन हुए । उन पर दृष्टि पड़ते ही राजा हर्ष में भरकर अपने वाहन से उतर पड़े और इन्द्रियों को वश में रखते हुए दोनों हाथ जोड़कर उन्होंने मुनि के चरणों में प्रणाम किया । मुनि ने भी 'स्वस्ति' कहकर राजा का अभिनन्दन किया और उनके राज्य के सातों अंगों की कुशलता पूछी । राजा ने अपनी कुशलता बताकर मुनि के स्वास्थय का समाचार पूछा । मुनि ने राजा को आसन और अर्ध्य दिया । उन्हें ग्रहण करके जब वे मुनि के समीप बैठे तो मुनि ने राजा से आगमन का कारण पूछा ।

राजा ने कहा : भगवन् ! मैं धर्मानुकूल प्रणाली से पृथ्वी का पालन कर रहा था । फिर भी मेरे राज्य में वर्षा का अभाव हो गया । इसका क्या कारण है इस बात को मैं नहीं जानता ।

ऋषि बोले : राजन् ! सब युगों में उत्तम यह सत्ययुग है । इसमें सब लोग परमात्मा के चिन्तन में लगे रहते हैं तथा इस समय धर्म अपने चारों चरणों से युक्त होता है । इस युग में केवल ब्राह्मण ही तपस्वी होते हैं, दूसरे लोग नहीं । किन्तु महाराज ! तुम्हारे राज्य में एक शूद्र तपस्या करता है, इसी कारण मेघ पानी नहीं बरसाते । तुम इसके प्रतिकार का यत्न करो, जिससे यह अनावृष्टि का दोष शांत हो जाय ।

राजा ने कहा : मुनिवर ! एक तो वह तपस्या में लगा है और दूसरे, वह निरपराध है । अतः मैं उसका अनिष्ट नहीं करुँगा । आप उक्त दोष को शांत करनेवाले किसी धर्म का उपदेश कीजिये ।

ऋषि बोले : राजन् ! यदि ऐसी बात है तो एकादशी का व्रत करो । भाद्रपद मास के शुक्लपक्ष में जो 'पधा' नाम से विख्यात एकादशी होती है, उसके व्रत के प्रभाव से निश्चय ही उत्तम वृष्टि होगी । नरेश ! तुम अपनी प्रजा और परिजनों के साथ इसका व्रत करो ।

ऋषि के ये वचन सुनकर राजा अपने घर लौट आये । उन्होंने चारों वर्णों की समस्त प्रजा के साथ भादों के शुक्लपक्ष की 'पधा एकादशी' का व्रत किया । इस प्रकार व्रत करने पर मेघ पानी बरसाने लगे । पृथ्वी जल से आप्लावित हो गयी और हरी भरी खेती से सुशोभित होने लगी । उस व्रत के प्रभाव से सब लोग सुखी हो गये ।

भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं : राजन् ! इस कारण इस उत्तम व्रत का अनुष्ठान अवश्य करना चाहिए । 'पधा एकादशी' के दिन जल से भरे हुए घड़े को वस्त्र से ढकँकर दही और चावल के साथ ब्राह्मण को दान देना चाहिए, साथ ही छाता और जूता भी देना चाहिए । दान करते समय निम्नांकित मंत्र का उच्चारण करना चाहिए :

नमो नमस्ते गोविन्द बुधश्रवणसंज्ञक ॥
अघौघसंक्षयं कृत्वा सर्वसौख्यप्रदो भव ।
भुक्तिमुक्तिप्रदश्चैव लोकानां सुखदायकः ॥

'बुधवार और श्रवण नक्षत्र के योग से युक्त द्वादशी के दिन बुद्धश्रवण नाम धारण करनेवाले भगवान गोविन्द ! आपको नमस्कार है... नमस्कार है ! मेरी पापराशि का नाश करके आप मुझे सब प्रकार के सुख प्रदान करें । आप पुण्यात्माजनों को भोग और मोक्ष प्रदान करनेवाले तथा सुखदायक हैं |'

राजन् ! इसके पढ़ने और सुनने से मनुष्य सब पापों से मुक्त हो जाता है ।

इन्दिरा एकादशी

युधिष्ठिर ने पूछा : हे मधुसूदन ! कृपा करके मुझे यह बताइये कि आश्विन के कृष्णपक्ष में कौन सी एकादशी होती है ?

भगवान श्रीकृष्ण बोले : राजन् ! आश्विन (गुजरात महाराष्ट्र के अनुसार भाद्रपद) के कृष्णपक्ष में 'इन्दिरा' नाम की एकादशी होती है । उसके व्रत के प्रभाव से बड़े बड़े पापों का नाश हो जाता है । नीच योनि में पड़े हुए पितरों को भी यह एकादशी सदगति देनेवाली है ।

राजन् ! पूर्वकाल की बात है । सत्ययुग में इन्द्रसेन नाम से विख्यात एक राजकुमार थे, जो माहिष्मतीपुरी के राजा होकर धर्मपूर्वक प्रजा का पालन करते थे । उनका यश सब ओर फैल चुका

था ।

राजा इन्द्रसेन भगवान विष्णु की भक्ति में तत्पर हो गोविन्द के मोक्षदायक नामों का जप करते हुए समय व्यतीत करते थे और विधिपूर्वक अध्यात्मतत्त्व के चिन्तन में संलग्न रहते थे । एक दिन राजा राजसभा में सुखपूर्वक बैठे हुए थे, इतने में ही देवर्षि नारद आकाश से उतरकर वहाँ आ पहुँचे । उन्हें आया हुआ देख राजा हाथ जोड़कर खड़े हो गये और विधिपूर्वक पूजन करके उन्हें आसन पर बिठाया । इसके बाद वे इस प्रकार बोले: 'मुनिश्रेष्ठ ! आपकी कृपा से मेरी सर्वथा कुशल है । आज आपके दर्शन से मेरी सम्पूर्ण यज्ञ क्रियाएँ सफल हो गयीं । देवर्षे ! अपने आगमन का कारण बताकर मुझ पर कृपा करें ।

नारदजी ने कहा : नृपश्रेष्ठ ! सुनो । मेरी बात तुम्हें आश्चर्य में डालनेवाली है । मैं ब्रह्मलोक से यमलोक में गया था । वहाँ एक श्रेष्ठ आसन पर बैठा और यमराज ने भक्तिपूर्वक मेरी पूजा की । उस समय यमराज की सभा में मैंने तुम्हारे पिता को भी देखा था । वे व्रतभंग के दोष से वहाँ आये थे । राजन् ! उन्होंने तुमसे कहने के लिए एक सन्देश दिया है, उसे सुनो । उन्होंने कहा है: 'बेटा ! मुझे 'इन्दिरा एकादशी' के व्रत का पुण्य देकर स्वर्ग में भेजो ।' उनका यह सन्देश लेकर मैं तुम्हारे पास आया हूँ । राजन् ! अपने पिता को स्वर्गलोक की प्राप्ति कराने के लिए 'इन्दिरा एकादशी' का व्रत करो ।

राजा ने पूछा : भगवन् ! कृपा करके 'इन्दिरा एकादशी' का व्रत बताइये । किस पक्ष में, किस तिथि को और किस विधि से यह व्रत करना चाहिए ।

नारदजी ने कहा : राजेन्द्र ! सुनो । मैं तुम्हें इस व्रत की शुभकारक विधि बतलाता हूँ । आश्विन मास के कृष्णपक्ष में दशमी के उत्तम दिन को श्रद्धायुक्त चित्त से प्रतःकाल स्नान करो । फिर मध्याह्नकाल में स्नान करके एकाग्रचित्त हो एक समय भोजन करो तथा रात्रि में भूमि पर सोओ । रात्रि के अन्त में निर्मल प्रभात होने पर एकादशी के दिन दातुन करके मुँह धोओ । इसके बाद भक्तिभाव से निम्नांकित मंत्र पढ़ते हुए उपवास का नियम ग्रहण करो :

अघ स्थित्वा निराहारः सर्वभोगविवर्जितः ।
श्वो भोक्ष्ये पुण्डरीकाक्ष शरणं मे भवाच्युत ॥

'कमलनयन भगवान नारायण ! आज मैं सब भोगों से अलग हो निराहार रहकर कल भोजन करुँगा । अच्युत ! आप मुझे शरण दें ।'

इस प्रकार नियम करके मध्याह्नकाल में पितरों की प्रसन्नता के लिए शालग्राम शिला के सम्मुख विधिपूर्वक श्राद्ध करो तथा दक्षिणा से ब्राह्मणों का सत्कार करके उन्हें भोजन कराओ । पितरों को दिये हुए अन्नमय पिण्ड को सूँघकर गाय को खिला दो । फिर धूप और गन्ध आदि से भगवान हृषिकेश का पूजन करके रात्रि में उनके समीप जागरण करो । तत्पश्चात् सवेरा होने पर द्वादशी के

दिन पुनः भक्तिपूर्वक श्रीहरि की पूजा करो । उसके बाद ब्राह्मणों को भोजन कराकर भाई बन्धु, नाती और पुत्र आदि के साथ स्वयं मौन होकर भोजन करो ।

राजन् ! इस विधि से आलस्यरहित होकर यह व्रत करो । इससे तुम्हारे पितर भगवान विष्णु के वैकुण्ठधाम में चले जायेंगे ।

भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं : राजन् ! राजा इन्द्रसेन से ऐसा कहकर देवर्षि नारद अन्तर्धान हो गये । राजा ने उनकी बतायी हुई विधि से अन्तः पुर की रानियों, पुत्रों और भृत्योंसहित उस उत्तम व्रत का अनुष्ठान किया ।

कुन्तीनन्दन ! व्रत पूर्ण होने पर आकाश से फूलों की वर्षा होने लगी । इन्द्रसेन के पिता गरुड़ पर आरुढ़ होकर श्रीविष्णुधाम को चले गये और राजर्षि इन्द्रसेन भी निष्कण्टक राज्य का उपभोग करके अपने पुत्र को राजसिंहासन पर बैठाकर स्वयं स्वर्गलोक को चले गये । इस प्रकार मैंने तुम्हारे सामने 'इन्दिरा एकादशी' व्रत के माहात्म्य का वर्णन किया है । इसको पढ़ने और सुनने से मनुष्य सब पापों से मुक्त हो जाता है ।

पापांकुशा एकादशी

युधिष्ठिर ने पूछा : हे मधुसूदन ! अब आप कृपा करके यह बताइये कि आश्विन के शुक्लपक्ष में किस नाम की एकादशी होती है और उसका माहात्म्य क्या है ?

भगवान श्रीकृष्ण बोले : राजन् ! आश्विन के शुक्लपक्ष में जो एकादशी होती है, वह 'पापांकुशा' के नाम से विख्यात है । वह सब पापों को हरनेवाली, स्वर्ग और मोक्ष प्रदान करनेवाली, शरीर को निरोग बनानेवाली तथा सुन्दर स्त्री, धन तथा मित्र देनेवाली है । यदि अन्य कार्य के प्रसंग से भी मनुष्य इस एकमात्र एकादशी को उपास कर ले तो उसे कभी यम यातना नहीं प्राप्त होती ।

राजन् ! एकादशी के दिन उपवास और रात्रि में जागरण करनेवाले मनुष्य अनायास ही दिव्यरुपधारी, चतुर्भुज, गरुड़ की ध्वजा से युक्त, हार से सुशोभित और पीताम्बरधारी होकर भगवान विष्णु के धाम को जाते हैं । राजेन्द्र ! ऐसे पुरुष मातृपक्ष की दस, पितृपक्ष की दस तथा पत्नी के पक्ष की भी दस पीढ़ियों का उद्धार कर देते हैं । उस दिन सम्पूर्ण मनोरथ की प्राप्ति के लिए मुझ वासुदेव का पूजन करना चाहिए । जितेन्द्रिय मुनि चिरकाल तक कठोर तपस्या करके जिस फल को प्राप्त करता है, वह फल उस दिन भगवान गरुड़ध्वज को प्रणाम करने से ही मिल जाता है ।

जो पुरुष सुवर्ण, तिल, भूमि, गौ, अन्न, जल, जूते और छाते का दान करता है, वह कभी यमराज को नहीं देखता । नृपश्रेष्ठ ! दरिद्र पुरुष को भी चाहिए कि वह स्नान, जप ध्यान आदि करने के बाद यथाशक्ति होम, यज्ञ तथा दान वगैरह करके अपने प्रत्येक दिन को सफल बनाये ।

जो होम, स्नान, जप, ध्यान और यज्ञ आदि पुण्यकर्म करनेवाले हैं, उन्हें भयंकर यम यातना नहीं देखनी पड़ती । लोक में जो मानव दीर्घायु, धनाढय, कुलीन और निरोग देखे जाते हैं, वे पहले के पुण्यात्मा हैं । पुण्यकर्त्ता पुरुष ऐसे ही देखे जाते हैं । इस विषय में अधिक कहने से क्या लाभ, मनुष्य पाप से दुर्गति में पड़ते हैं और धर्म से स्वर्ग में जाते हैं ।

राजन् ! तुमने मुझसे जो कुछ पूछा था, उसके अनुसार 'पापांकुशा एकादशी' का माहात्म्य मैंने वर्णन किया । अब और क्या सुनना चाहते हो?

रमा एकादशी

युधिष्ठिर ने पूछा : जनार्दन ! मुझ पर आपका स्नेह है, अतः कृपा करके बताइये कि कार्तिक के कृष्णपक्ष में कौन सी एकादशी होती है ?

भगवान श्रीकृष्ण बोले : राजन् ! कार्तिक (गुजरात महाराष्ट्र के अनुसार आश्विन) के कृष्णपक्ष में 'रमा' नाम की विख्यात और परम कल्याणमयी एकादशी होती है । यह परम उत्तम है और बड़े-बड़े पापों को हरनेवाली है ।

पूर्वकाल में मुचुकुन्द नाम से विख्यात एक राजा हो चुके हैं, जो भगवान श्रीविष्णु के भक्त और सत्यप्रतिज्ञ थे । अपने राज्य पर निष्कण्टक शासन करनेवाले उन राजा के यहाँ नदियों में श्रेष्ठ 'चन्द्रभागा' कन्या के रुप में उत्पन्न हुई । राजा ने चन्द्रसेनकुमार शोभन के साथ उसका विवाह कर दिया । एक बार शोभन दशमी के दिन अपने ससुर के घर आये और उसी दिन समूचे नगर में पूर्ववत् ढिंढ़ोरा पिटवाया गया कि: 'एकादशी के दिन कोई भी भोजन न करे ।' इसे सुनकर शोभन ने अपनी प्यारी पत्नी चन्द्रभागा से कहा : 'प्रिये ! अब मुझे इस समय क्या करना चाहिए, इसकी शिक्षा दो ।'

चन्द्रभागा बोली : प्रभो ! मेरे पिता के घर पर एकादशी के दिन मनुष्य तो क्या कोई पालतू पशु आदि भी भोजन नहीं कर सकते । प्राणनाथ ! यदि आप भोजन करेंगे तो आपकी बड़ी निन्दा होगी । इस प्रकार मन में विचार करके अपने चित्त को दृढ़ कीजिये ।

शोभन ने कहा : प्रिये ! तुम्हारा कहना सत्य है । मैं भी उपवास करुँगा । दैव का जैसा विधान है, वैसा ही होगा ।

भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं : इस प्रकार दृढ निश्चय करके शोभन ने व्रत के नियम का पालन किया किन्तु सूर्योदय होते होते उनका प्राणान्त हो गया । राजा मुचुकुन्द ने शोभन का राजोचित दाह संस्कार कराया । चन्द्रभागा भी पति का पारलौकिक कर्म करके पिता के ही घर पर रहने लगी ।

नृपश्रेष्ठ ! उधर शोभन इस व्रत के प्रभाव से मन्दराचल के शिखर पर बसे हुए परम रमणीय देवपुर को प्राप्त हुए । वहाँ शोभन द्वितीय कुबेर की भाँति शोभा पाने लगे । एक बार राजा मुचुकुन्द के नगरवासी विख्यात ब्राह्मण सोमशर्मा तीर्थयात्रा के प्रसंग से घूमते हुए मन्दराचल पर्वत पर गये, जहाँ उन्हें शोभन दिखायी दिये । राजा के दामाद को पहचानकर वे उनके समीप गये । शोभन भी उस समय द्विजश्रेष्ठ सोमशर्मा को आया हुआ देखकर शीघ्र ही आसन से उठ खड़े हुए और उन्हें प्रणाम किया । फिर क्रमश : अपने ससुर राजा मुचुकुन्द, प्रिय पत्नी चन्द्रभागा तथा समस्त नगर का कुशलक्षेम पूछा ।

सोमशर्मा ने कहा : राजन् ! वहाँ सब कुशल हैं । आश्चर्य है ! ऐसा सुन्दर और विचित्र नगर तो कहीं किसीने भी नहीं देखा होगा । बताओ तो सही, आपको इस नगर की प्राप्ति कैसे हुई?

शोभन बोले : द्विजेन्द्र ! कार्तिक के कृष्णपक्ष में जो 'रमा' नाम की एकादशी होती है, उसीका व्रत करने से मुझे ऐसे नगर की प्राप्ति हुई है । ब्रह्मन् ! मैंने श्रद्धाहीन होकर इस उत्तम व्रत का अनुष्ठान किया था, इसलिए मैं ऐसा मानता हूँ कि यह नगर स्थायी नहीं है । आप मुचुकुन्द की सुन्दरी कन्या चन्द्रभागा से यह सारा वृत्तान्त कहियेगा ।

शोभन की बात सुनकर ब्राह्मण मुचुकुन्दपुर में गये और वहाँ चन्द्रभागा के सामने उन्होंने सारा वृत्तान्त कह सुनाया ।

सोमशर्मा बोले : शुभे ! मैंने तुम्हारे पति को प्रत्यक्ष देखा । इन्द्रपुरी के समान उनके दुर्द्धर्ष नगर का भी अवलोकन किया, किन्तु वह नगर अस्थिर है । तुम उसको स्थिर बनाओ ।

चन्द्रभागा ने कहा : ब्रह्मर्षे ! मेरे मन में पति के दर्शन की लालसा लगी हुई है । आप मुझे वहाँ ले चलिये । मैं अपने व्रत के पुण्य से उस नगर को स्थिर बनाऊँगी ।

भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं : राजन् ! चन्द्रभागा की बात सुनकर सोमशर्मा उसे साथ ले मन्दराचल पर्वत के निकट वामदेव मुनि के आश्रम पर गये । वहाँ ॠषि के मंत्र की शक्ति तथा एकादशी सेवन के प्रभाव से चन्द्रभागा का शरीर दिव्य हो गया तथा उसने दिव्य गति प्राप्त कर ली । इसके बाद वह पति के समीप गयी । अपनी प्रिय पत्नी को आया हुआ देखकर शोभन को बड़ी प्रसन्नता हुई । उन्होंने उसे बुलाकर अपने वाम भाग में सिंहासन पर बैठाया । तदनन्तर

चन्द्रभागा ने अपने प्रियतम से यह प्रिय वचन कहा: 'नाथ ! मैं हित की बात कहती हूँ, सुनिये । जब मैं आठ वर्ष से अधिक उम्र की हो गयी, तबसे लेकर आज तक मेरे द्वारा किये हुए एकादशी व्रत से जो पुण्य संचित हुआ है, उसके प्रभाव से यह नगर कल्प के अन्त तक स्थिर रहेगा तथा सब प्रकार के मनोवांछित वैभव से समृद्धिशाली रहेगा ।'

नृपश्रेष्ठ ! इस प्रकार 'रमा' व्रत के प्रभाव से चन्द्रभागा दिव्य भोग, दिव्य रुप और दिव्य आभरणों से विभूषित हो अपने पति के साथ मन्दराचल के शिखर पर विहार करती है । राजन् ! मैंने तुम्हारे समक्ष 'रमा' नामक एकादशी का वर्णन किया है । यह चिन्तामणि तथा कामधेनु के समान सब मनोरथों को पूर्ण करनेवाली है ।

प्रबोधिनी एकादशी

भगवान श्रीकृष्ण ने कहा : हे अर्जुन ! मैं तुम्हें मुक्ति देनेवाली कार्तिक मास के शुक्लपक्ष की 'प्रबोधिनी एकादशी' के सम्बन्ध में नारद और ब्रह्माजी के बीच हुए वार्तालाप को सुनाता हूँ । एक बार नारादजी ने ब्रह्माजी से पूछा : 'हे पिता ! 'प्रबोधिनी एकादशी' के व्रत का क्या फल होता है, आप कृपा करके मुझे यह सब विस्तारपूर्वक बतायें ।'

ब्रह्माजी बोले : हे पुत्र ! जिस वस्तु का त्रिलोक में मिलना दुष्कर है, वह वस्तु भी कार्तिक मास के शुक्लपक्ष की 'प्रबोधिनी एकादशी' के व्रत से मिल जाती है । इस व्रत के प्रभाव से पूर्व जन्म के किये हुए अनेक बुरे कर्म क्षणभर में नष्ट हो जाते है । हे पुत्र ! जो मनुष्य श्रद्धापूर्वक इस दिन थोड़ा भी पुण्य करते हैं, उनका वह पुण्य पर्वत के समान अटल हो जाता है । उनके पितृ विष्णुलोक में जाते हैं । ब्रह्महत्या आदि महान पाप भी 'प्रबोधिनी एकादशी' के दिन रात्रि को जागरण करने से नष्ट हो जाते हैं ।

हे नारद ! मनुष्य को भगवान की प्रसन्नता के लिए कार्तिक मास की इस एकादशी का व्रत अवश्य करना चाहिए । जो मनुष्य इस एकादशी व्रत को करता है, वह धनवान, योगी, तपस्वी तथा इन्द्रियों को जीतनेवाला होता है, क्योंकि एकादशी भगवान विष्णु को अत्यंत प्रिय है ।

इस एकादशी के दिन जो मनुष्य भगवान की प्राप्ति के लिए दान, तप, होम, यज्ञ (भगवान्नामजप भी परम यज्ञ है। **'यज्ञानां जपयज्ञोऽस्मि'** । यज्ञों में जपयज्ञ मेरा ही स्वरुप है।' - श्रीमद्भगवदगीता) आदि करते हैं, उन्हें अक्षय पुण्य मिलता है ।

इसलिए हे नारद ! तुमको भी विधिपूर्वक विष्णु भगवान की पूजा करनी चाहिए । इस एकादशी के दिन मनुष्य को ब्रह्ममुहूर्त में उठकर व्रत का संकल्प लेना चाहिए और पूजा करनी चाहिए । रात्रि

को भगवान के समीप गीत, नृत्य, कथा-कीर्तन करते हुए रात्रि व्यतीत करनी चाहिए ।

'प्रबोधिनी एकादशी' के दिन पुष्प, अगर, धूप आदि से भगवान की आराधना करनी चाहिए, भगवान को अर्ध्य देना चाहिए । इसका फल तीर्थ और दान आदि से करोड़ गुना अधिक होता है ।

जो गुलाब के पुष्प से, बकुल और अशोक के फूलों से, सफेद और लाल कनेर के फूलों से, दूर्वादल से, शमीपत्र से, चम्पकपुष्प से भगवान विष्णु की पूजा करते हैं, वे आवागमन के चक्र से छूट जाते हैं । इस प्रकार रात्रि में भगवान की पूजा करके प्रात:काल स्नान के पश्चात् भगवान की प्रार्थना करते हुए गुरु की पूजा करनी चाहिए और सदाचारी व पवित्र ब्राह्मणों को दक्षिणा देकर अपने व्रत को छोड़ना चाहिए ।

जो मनुष्य चातुर्मास्य व्रत में किसी वस्तु को त्याग देते हैं, उन्हें इस दिन से पुनः ग्रहण करनी चाहिए । जो मनुष्य 'प्रबोधिनी एकादशी' के दिन विधिपूर्वक व्रत करते हैं, उन्हें अनन्त सुख मिलता है और अंत में स्वर्ग को जाते हैं ।

परमा एकादशी

अर्जुन बोले : हे जनार्दन ! आप अधिक (लौंद/मल/पुरुषोत्तम) मास के कृष्णपक्ष की एकादशी का नाम तथा उसके व्रत की विधि बतलाइये । इसमें किस देवता की पूजा की जाती है तथा इसके व्रत से क्या फल मिलता है?

श्रीकृष्ण बोले : हे पार्थ ! इस एकादशी का नाम 'परमा' है । इसके व्रत से समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं तथा मनुष्य को इस लोक में सुख तथा परलोक में मुक्ति मिलती है । भगवान विष्णु की धूप, दीप, नैवेध, पुष्प आदि से पूजा करनी चाहिए । महर्षियों के साथ इस एकादशी की जो मनोहर कथा काम्पिल्य नगरी में हुई थी, कहता हूँ । ध्यानपूर्वक सुनो :

काम्पिल्य नगरी में सुमेधा नाम का अत्यंत धर्मात्मा ब्राह्मण रहता था । उसकी स्त्री अत्यन्त पवित्र तथा पतिव्रता थी । पूर्व के किसी पाप के कारण यह दम्पति अत्यन्त दरिद्र था । उस ब्राह्मण की पत्नी अपने पति की सेवा करती रहती थी तथा अतिथि को अन्न देकर स्वयं भूखी रह जाती थी ।

एक दिन सुमेधा अपनी पत्नी से बोला: 'हे प्रिये ! गृहस्थी धन के बिना नहीं चलती इसलिए मैं परदेश जाकर कुछ उद्योग करुँ ।'

उसकी पत्नी बोली: 'हे प्राणनाथ ! पति अच्छा और बुरा जो कुछ भी कहे, पत्नी को वही करना चाहिए । मनुष्य को पूर्वजन्म के कर्मों का फल मिलता है । विधाता ने भाग्य में जो कुछ लिखा है, वह टाले से भी नहीं टलता । हे प्राणनाथ ! आपको कहीं जाने की आवश्यकता नहीं, जो भाग्य में होगा, वह यहीं मिल जायेगा ।'

पत्नी की सलाह मानकर ब्राह्मण परदेश नहीं गया । एक समय कौण्डिन्य मुनि उस जगह आये । उन्हें देखकर सुमेधा और उसकी पत्नी ने उन्हें प्रणाम किया और बोले: 'आज हम धन्य हुए । आपके दर्शन से हमारा जीवन सफल हुआ ।' मुनि को उन्होंने आसन तथा भोजन दिया ।

भोजन के पश्चात् पतिव्रता बोली: 'हे मुनिवर ! मेरे भाग्य से आप आ गये हैं । मुझे पूर्ण विश्वास है कि अब मेरी दरिद्रता शीघ्र ही नष्ट होनेवाली है । आप हमारी दरिद्रता नष्ट करने के लिए उपाय बतायें ।'

इस पर कौण्डिन्य मुनि बोले : 'अधिक मास' (मल मास) की कृष्णपक्ष की 'परमा एकादशी' के व्रत से समस्त पाप, दु:ख और दरिद्रता आदि नष्ट हो जाते हैं । जो मनुष्य इस व्रत को करता है, वह धनवान हो जाता है । इस व्रत में कीर्तन भजन आदि सहित रात्रि जागरण करना चाहिए । महादेवजी ने कुबेर को इसी व्रत के करने से धनाध्यक्ष बना दिया है ।'

फिर मुनि कौण्डिन्य ने उन्हें 'परमा एकादशी' के व्रत की विधि कह सुनायी । मुनि बोले: 'हे ब्राह्मणी ! इस दिन प्रात: काल नित्यकर्म से निवृत्त होकर विधिपूर्वक पंचरात्रि व्रत आरम्भ करना चाहिए । जो मनुष्य पाँच दिन तक निर्जल व्रत करते हैं, वे अपने माता पिता और स्त्रीसहित स्वर्गलोक को जाते हैं । हे ब्राह्मणी ! तुम अपने पति के साथ इसी व्रत को करो । इससे तुम्हें अवश्य ही सिद्धि और अन्त में स्वर्ग की प्राप्ति होगी |'

कौण्डिन्य मुनि के कहे अनुसार उन्होंने 'परमा एकादशी' का पाँच दिन तक व्रत किया । व्रत समाप्त होने पर ब्राह्मण की पत्नी ने एक राजकुमार को अपने यहाँ आते हुए देखा । राजकुमार ने ब्रह्माजी की प्रेरणा से उन्हें आजीविका के लिए एक गाँव और एक उत्तम घर जो कि सब वस्तुओं से परिपूर्ण था, रहने के लिए दिया । दोनों इस व्रत के प्रभाव से इस लोक में अनन्त सुख भोगकर अन्त में स्वर्गलोक को गये ।

हे पार्थ ! जो मनुष्य 'परमा एकादशी' का व्रत करता है, उसे समस्त तीर्थों व यज्ञों आदि का फल मिलता है । जिस प्रकार संसार में चार पैरवालों में गौ, देवताओं में इन्द्रराज श्रेष्ठ हैं, उसी प्रकार मासों में अधिक मास उत्तम है । इस मास में पंचरात्रि अत्यन्त पुण्य देनेवाली है । इस महीने में 'पद्मिनी एकादशी' भी श्रेष्ठ है। उसके व्रत से समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं और पुण्यमय लोकों की प्राप्ति होती है ।

पद्मिनी एकादशी

अर्जुन ने कहा: हे भगवन् ! अब आप अधिक (लौंद/ मल/ पुरुषोत्तम) मास की शुक्लपक्ष की एकादशी के विषय में बतायें, उसका नाम क्या है तथा व्रत की विधि क्या है? इसमें किस देवता की पूजा की जाती है और इसके व्रत से क्या फल मिलता है?

श्रीकृष्ण बोले : हे पार्थ ! अधिक मास की एकादशी अनेक पुण्यों को देनेवाली है, उसका नाम 'पद्मिनी' है । इस एकादशी के व्रत से मनुष्य विष्णुलोक को जाता है । यह अनेक पापों को नष्ट करनेवाली तथा मुक्ति और भक्ति प्रदान करनेवाली है । इसके फल व गुणों को ध्यानपूर्वक सुनो: दशमी के दिन व्रत शुरु करना चाहिए । एकादशी के दिन प्रात: नित्यक्रिया से निवृत्त होकर पुण्य क्षेत्र में स्नान करने चले जाना चाहिए । उस समय गोबर, मृत्तिका, तिल, कुश तथा आमलकी चूर्ण से विधिपूर्वक स्नान करना चाहिए । स्नान करने से पहले शरीर में मिट्टी लगाते हुए उसीसे प्रार्थना करनी चाहिए: 'हे मृत्तिके ! मैं तुमको नमस्कार करता हूँ । तुम्हारे स्पर्श से मेरा शरीर पवित्र हो । समस्त औषधियों से पैदा हुई और पृथ्वी को पवित्र करनेवाली, तुम मुझे शुद्ध करो । ब्रह्मा के थूक से पैदा होनेवाली ! तुम मेरे शरीर को छूकर मुझे पवित्र करो । हे शंख चक्र गदाधारी देवों के देव ! जगन्नाथ ! आप मुझे स्नान के लिए आज्ञा दीजिये ।'

इसके उपरान्त वरुण मंत्र को जपकर पवित्र तीर्थों के अभाव में उनका स्मरण करते हुए किसी तालाब में स्नान करना चाहिए । स्नान करने के पश्चात् स्वच्छ और सुन्दर वस्त्र धारण करके संध्या, तर्पण करके मंदिर में जाकर भगवान की धूप, दीप, नैवेद्य, पुष्प, केसर आदि से पूजा करनी चाहिए । उसके उपरान्त भगवान के सम्मुख नृत्य गान आदि करें ।

भक्तजनों के साथ भगवान के सामने पुराण की कथा सुननी चाहिए । अधिक मास की शुक्लपक्ष की 'पद्मिनी एकादशी' का व्रत निर्जल करना चाहिए । यदि मनुष्य में निर्जल रहने की शक्ति न हो तो उसे जल पान या अल्पाहार से व्रत करना चाहिए । रात्रि में जागरण करके नाच और गान करके भगवान का स्मरण करते रहना चाहिए । प्रति पहर मनुष्य को भगवान या महादेवजी की पूजा करनी चाहिए ।

पहले पहर में भगवान को नारियल, दूसरे में बिल्वफल, तीसरे में सीताफल और चौथे में सुपारी, नारंगी अर्पण करना चाहिए । इससे पहले पहर में अग्नि होम का, दूसरे में वाजपेय यज्ञ का, तीसरे में अश्वमेघ यज्ञ का और चौथे में राजसूय यज्ञ का फल मिलता है । इस व्रत से बढ़कर संसार में कोई यज्ञ, तप, दान या पुण्य नहीं है । एकादशी का व्रत करनेवाले मनुष्य को समस्त तीर्थों और यज्ञों का फल मिल जाता है ।

इस तरह से सूर्योदय तक जागरण करना चाहिए और स्नान करके ब्राह्मणों को भोजन करना चाहिए । इस प्रकार जो मनुष्य विधिपूर्वक भगवान की पूजा तथा व्रत करते हैं, उनका जन्म सफल होता है और वे इस लोक में अनेक सुखों को भोगकर अन्त में भगवान विष्णु के परम धाम को जाते हैं । हे पार्थ ! मैंने तुम्हें एकादशी के व्रत का पूरा विधान बता दिया ।

अब जो 'पद्मिनी एकादशी' का भक्तिपूर्वक व्रत कर चुके हैं, उनकी कथा कहता हूँ, ध्यानपूर्वक सुनो । यह सुन्दर कथा पुलस्त्यजी ने नारदजी से कही थी : एक समय कार्तवीर्य ने रावण को अपने बंदीगृह में बंद कर लिया । उसे मुनि पुलस्त्यजी ने कार्तवीर्य से विनय करके छुड़ाया । इस घटना को सुनकर नारदजी ने पुलस्त्यजी से पूछा : 'हे महाराज ! उस मायावी रावण को, जिसने समस्त देवताओं सहित इन्द्र को जीत लिया, कार्तवीर्य ने किस प्रकार जीता, सो आप मुझे समझाइये ।'

इस पर पुलस्त्यजी बोले : 'हे नारदजी ! पहले कृतवीर्य नामक एक राजा राज्य करता था । उस राजा को सौ स्त्रियाँ थीं, उसमें से किसीको भी राज्यभार सँभालनेवाला योग्य पुत्र नहीं था । तब राजा ने आदरपूर्वक पण्डितों को बुलवाया और पुत्र की प्राप्ति के लिए यज्ञ किये, परन्तु सब असफल रहे । जिस प्रकार दु:खी मनुष्य को भोग नीरस मालूम पड़ते हैं, उसी प्रकार उसको भी अपना राज्य पुत्र बिना दुःखमय प्रतीत होता था । अन्त में वह तप के द्वारा ही सिद्धियों को प्राप्त जानकर तपस्या करने के लिए वन को चला गया । उसकी स्त्री भी (हरिश्चन्द्र की पुत्री प्रमदा) वस्त्रालंकारों को त्यागकर अपने पति के साथ गन्धमादन पर्वत पर चली गयी । उस स्थान पर इन लोगों ने दस हजार वर्ष तक तपस्या की परन्तु सिद्धि प्राप्त न हो सकी । राजा के शरीर में केवल हड्डियाँ रह गयीं । यह देखकर प्रमदा ने विनयसहित महासती अनसूया से पूछा: मेरे पतिदेव को तपस्या करते हुए दस हजार वर्ष बीत गये, परन्तु अभी तक भगवान प्रसन्न नहीं हुए हैं, जिससे मुझे पुत्र प्राप्त हो । इसका क्या कारण है?

इस पर अनसूया बोली कि अधिक (लौंद/मल) मास में जो कि छत्तीस महीने बाद आता है, उसमें दो एकादशी होती है । इसमें शुक्लपक्ष की एकादशी का नाम 'पद्मिनी' और कृष्णपक्ष की एकादशी का नाम 'परमा' है । उसके व्रत और जागरण करने से भगवान तुम्हें अवश्य ही पुत्र देंगे ।

इसके पश्चात् अनसूयाजी ने व्रत की विधि बतलायी । रानी ने अनसूया की बतलायी विधि के अनुसार एकादशी का व्रत और रात्रि में जागरण किया । इससे भगवान विष्णु उस पर बहुत प्रसन्न हुए और वरदान माँगने के लिए कहा ।

रानी ने कहा : आप यह वरदान मेरे पति को दीजिये ।

प्रमदा का वचन सुनकर भगवान विष्णु बोले : 'हे प्रमदे ! मल मास (लौंद) मुझे बहुत प्रिय है । उसमें भी एकादशी तिथि मुझे सबसे अधिक प्रिय है । इस एकादशी का व्रत तथा रात्रि जागरण तुमने विधिपूर्वक किया, इसलिए मैं तुम पर अत्यन्त प्रसन्न हूँ ।' इतना कहकर भगवान विष्णु राजा से बोले: 'हे राजेन्द्र ! तुम अपनी इच्छा के अनुसार वर माँगो । क्योंकि तुम्हारी स्त्री ने मुझको प्रसन्न किया है ।'

भगवान की मधुर वाणी सुनकर राजा बोला : 'हे भगवन् ! आप मुझे सबसे श्रेष्ठ, सबके द्वारा पूजित तथा आपके अतिरिक्त देव दानव, मनुष्य आदि से अजेय उत्तम पुत्र दीजिये ।' भगवान तथास्तु कहकर अन्तर्धान हो गये । उसके बाद वे दोनों अपने राज्य को वापस आ गये । उन्हींके यहाँ कार्तवीर्य उत्पन्न हुए थे । वे भगवान के अतिरिक्त सबसे अजेय थे । इन्होंने रावण को जीत लिया था । यह सब 'पद्मिनी' के व्रत का प्रभाव था । इतना कहकर पुलस्त्यजी वहाँ से चले गये ।

भगवान श्रीकृष्ण ने कहा : हे पाण्डुनन्दन अर्जुन ! यह मैंने अधिक (लौंद/मल/पुरुषोत्तम) मास के शुक्लपक्ष की एकादशी का व्रत कहा है । जो मनुष्य इस व्रत को करता है, वह विष्णुलोक को जाता है |